H
812.8
B 469 Kr

H
812.8
B469 Kr

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY SIMLA

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत

क्रान्तिकारी

उदयशंकर भट्ट

1969

आत्माराम एण्ड संस

दिल्ली. नई दिल्ली. जयपुर. लखनऊ. चण्डीगढ़

CATALOGUED

KRANTIKARI
by
Uday Shankar Bhatt
Rs. 2.00

© 1969, ATMA RAM & SONS, DELHI-6.

Library IIAS, Shimla
H 812.8 B 469 Kr
00039859

39859
21·6·72

H
812.8

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक.
आत्माराम एण्ड संस,
कश्मीरी गेट, दिल्ली-6 ।

शाखाएं
हौज खास, नई दिल्ली .
धमानी मार्केट, जयपुर.
१७ अशोक मार्ग, लखनऊ.
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चंडीगढ़.

तृतीय संस्करण, 1969
मूल्य : रुपए 2.00

Library IIAS, Shimla
H 812.8 B 469 Kr
00039859

मुद्रक :
रूपक प्रिंटर्स,
दिल्ली-32.

प्रस्तावना

'क्रान्तिकारी' में भट्टजी की प्रतिभा नवीन वस्तु-क्षेत्र में प्रवेश कर उसे प्रभावोत्पादक रंगमंच पर प्रतिष्ठित कर सकी है। समस्त नाटक जैसे दिवाकर के पूर्ण बलिदान के लिए एक उत्तप्त यज्ञकुंड हो, जिसकी आत्माहुति उसकी अप्रतिहत चारित्रिक दृढ़ता को निखारती है, घटनाचक्र की निर्मम नृशंसता को भी द्रवीभूत कर उसके अमानुषीय हत्याकांड एवं रक्त-तर्पण को एक प्रकार की निष्ठा तथा पवित्रता प्रदान कर देती है। द्वितीय दृश्य जितना करुण तथा हृदयद्रावक है अन्तिम दृश्य उतना ही कठोर तथा रोमांचक। नायक की साहसिकता एवं संगठन के निर्णय के प्रति आत्म-समर्पण कथानक की उग्रता को सहज स्वाभाविक बना देता है। वीणा और रेणु तो जैसे अपनी परिस्थितियों के वैषम्य से एक-दूसरे की पूर्ति करती हुई और भी तीव्र रूप से इन में प्रस्फुटित हो उठती हैं। नाटक में अनेक प्रकार के इंगित निहित हैं। सन्देह क्रान्ति के लिए कैसा घातक सिद्ध होता है अथवा बहुमत कभी कितना भ्रामक हो सकता है यह सत्य काले बादलों की पृष्ठभूमि में बिजली की तरह कौंध उठता है।

नाटक की सर्वांगीण सफलता के लिए भट्टजी को बहुत बधाई देता हूँ।

—सुमित्रानन्दन पन्त

इलाहाबाद

प्रकाशकीय

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक स्वर्गीय श्री उदयशंकर भट्ट हिन्दी के मूर्धन्य कलाकार थे। उन्होंने अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय अपनी कृतियों, नाटक, एकांकी तथा उपन्यासों के द्वारा प्रस्तुत किया है। उन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि में जो योगदान दिया है निःसन्देह वह गौरवमय है। विशेषकर नाटक के क्षेत्र में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण और अभिनन्दनीय है।

भट्टजी ने जहां सामाजिक, ऐतिहासिक और पौराणिक नाटक हिन्दी जगत को दिये हैं वहां उन्होंने प्रस्तुत राजनैतिक नाटक 'क्रान्तिकारी' भी दिया है जिसमें पाश्चात्य राज्य की अंग्रेजी सत्ता के अत्याचारों का, दमन नीति का यथार्थ चित्र अंकित किया गया है।

नाटक का यह तृतीय संस्करण है। आशा है भारतीय राष्ट्रीय आदर्शों के प्रति सहानुभूति और राष्ट्रीयकरण की झांकी प्रस्तुत करने वाले इस नाटक को और भी हिन्दी जगत द्वारा अपनाया जायगा।

यद्यपि भट्टजी अब हमारे मध्य नहीं हैं, फिर भी उनकी अमर कृतियां उन्हें हिन्दी जगत में चिरकाल तक अक्षुण्ण बनाये रखेंगी और उन्हें हिन्दी के उन्नायकों के रूप में सदा आदर के साथ स्मरण किया जायगा।

दो शब्द

हमारे देश में सदियों से चली आई पराधीनता को नष्ट करने के जो प्रयत्न हुए उनमें क्रान्तिकारी दल का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैसे तो औरगजेव के राज्यकाल में ही एक विशेष प्रकार की क्रान्ति के द्वारा मुगल साम्राज्य का पतन होने लगा था। उस समय और उससे पहले होने वाले विद्रोहों को भले ही एक धार्मिक वर्ग-विशेष की ओर से संगठित विरोध का रूप भी हम मान लें तो उसमें भी क्रान्ति के बीज मौजूद थे और आगे चलकर ब्रिटिश-शासन-काल में साम्प्रदायिकता ने अपना रूप बदलकर विद्रोह के नये रूप में प्रवेश किया, वह देश की विद्रोह नीति का राजनीतिक रूप था, जिसने इस देश के सभी लोगों को मिला दिया, वह 1857 का विद्रोह राजनीतिक विद्रोह था। उसने काश्मीर से लेकर सुदूर दक्षिण प्रान्त को एक सूत्र में बाँध दिया। 1795 का सिपाही-विद्रोह, वेल्लोर का विद्रोह, अरब में वहाबी आन्दोलन, वहाबियों का ब्रिटिश विरोध, तीतू मियाँ का आन्दोलन आदि इस बात के प्रमाण हैं कि हमारे आन्दोलन की नींव का मूल देशभक्ति को आधार मानकर चला। केशवचन्द्र, राजा राममोहनराय, स्वामी दयानन्द, आदि महापुरुषों ने मूल भावनाओं में बौद्धिक तत्त्वों द्वारा राष्ट्रीयता के जागरण को उद्बुद्ध किया। हिन्दू-मुसलमानों के द्वारा संगठित क्रान्ति ने फिर वर्ग-विशेष को अपने में बांध लिया। परिणामस्वरूप क्रान्ति का आंदोलन एकांगी हो गया। उसके मूल में जहां एक समाज-विशेष ने राष्ट्रीयता के आन्दोलन को तीव्रता से चलाना अपना ध्येय मान लिया वहाँ देश के दूसरे वर्ग ने ब्रिटिश शासन के द्वारा फैलाए प्रलोभनों से लाभ उठाना भी अपना कर्तव्य समझा। अपवाद दोनों ओर थे। फिर भी मूलत: क्रान्तिकारी आन्दोलन बहुत काल तक एक वर्ग विशेष की ओर से ही होता रहा, जिसमें देश को दैवी शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया। स्वतन्त्रता को गीता के द्वारा समझने का यत्न किया गया। फिर भी अहमदअली सिद्दीकी, अशफाक-उल्ला जैसे कुछ व्यक्ति थे जिन्होंने इस आन्दोलन के वास्तविक महत्त्व को

समझा और पराधीनता के अभिशाप को सम्पूर्ण देश के लिए स्वीकार किया।

कहना नहीं होगा कि हमारी क्रान्ति का ध्येय एक होते हुए भी उसने कई रूपों, कई आकारों में देश के मानस को झकझोरा है। और निरन्तर प्रवहमान नदी की धारा की तरह क्रान्ति भी कई रूप वदलती रही है।

मेरा 'क्रान्तिकारी' नाटक उसी सामूहिक राष्ट्रीय जागरण की एक झाँकी-मात्र है। क्योंकि यह युग स्वयं अपने में कई छोटे-छोटे युगों को समेटे हुए है, मैंने इस नाटक में प्रतीक रूप से वैसी सुगठित झांकी देने का प्रयत्न किया है। इसमें काल की कुछ सीमाएं अवश्य हैं किन्तु वे भी नाटक की प्रणयन-ग्रन्थियां मात्र हैं। कथा-वस्तु को निरन्तर बनाए रखने के लिए वे भाग भी आवश्यक थे। हो सकता है मेरा यह प्रयत्न इतने वड़े काल को कुछ क्षणों में बाँधने के समान हो किन्तु इससे मुझे दुःख नहीं है, बल्कि सन्तोष ही है। क्योंकि यह नाटक न तो पूर्ण इतिहास है और न कोरी कल्पना, इसीलिए भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद प्रत्यक्ष रूप से इसमें नहीं आ पाए हैं। इसीलिए मैंने इस नाटक में ब्रिटिश शासन के वे घृणित परिच्छेद भी नहीं दिये हैं, जिन्होंने अपना पंजा जमाते ही हमारे देश की स्वाधीनता को अपनी कूटनीति के तिल-तिल एवं प्रच्छन्न प्रयत्नों से कुचल डाला। आज वैसा करने की मुझे आवश्यकता नहीं लगी, क्योंकि हमारे सम्वन्ध वदल गए हैं। वैयक्तिक पात्रों के सामूहिक उद्देश्य की एक धारा नाटक में मिलेगी, जिसे दिखाने मैं चला हूँ।

वहुत दिन पहले शायद 1921-22 में असहयोग आन्दोलन के समय चित्तरंजन दास के त्याग पर एक नाटक लिखा था। वह खेला भी गया। मैं ने स्वयं सी० आर० दास का अभिनय किया था। लगातार कई दिनों तक नाटक का नशा लोगों पर छाया रहा, किन्तु आज मेरे पास वह नाटक नहीं है। मैं अपनी लापरवाही प्रकृति के कारण उसे संभालकर नहीं रख सका। इस दृष्टि से यह मेरा दूसरा राजनीतिक नाटक कहा जायगा।

यह नाटक चार दृश्यों में समाप्त हुआ है तथा अंक एक में। ऐसी अवस्था में यह एकांकी नाटक भी कहा जा सकता है। किन्तु मैं इसे पूर्ण नाटक के रूप में ही स्वीकार करता हूँ, क्योंकि एकांकी नाटक का कोई और लक्षण इस नाटक में नहीं है। कथा-उपकथाओं की अन्विति तथा कई दृश्य-विधानों में संगति होने के कारण यह अपने में पूर्ण है।

—**नाटककार**

क्रान्तिकारी

पात्र-परिचय

दिवाकर	क्रांतिकारी
स्वामी	क्रांतिकारी
यासीन	क्रांतिकारी
नीलूदा	क्रांतिकारी
राजेन्द्र	क्रांतिकारी
मुरली	क्रांतिकारी
मनोहरसिंह	सी० आई० डी० अफसर
ट्यूडर	सी० आई० डी० अफसर
वीणा	मनोहरसिंह की पत्नी
दयामयी	दिवाकर की मां
रेणु	दिवाकर की पत्नी
जीवन	दिवाकर का लड़का
	पुलिस कर्मचारी, डाक्टर, नौकर आदि

पहला दृश्य

[पर्दा उठते ही बँगले का बाहरी भाग दिखाई देता है। आठ-बारह के आकार का कमरा, उतना ही लताच्छादित बरामदा। बरामदे में तीन-चार मोढ़े, कुर्सियाँ और एक आरामकुर्सी पड़ी है। बरामदा टीन से ढका है इसलिए कभी-कभी किसी बन्दर के आ कूदने पर एकबारगी हिल उठता है और ज़ोर से धमाके की आवाज आती है। कमरे में एक खाट, कुरसी और मेज़ हैं। कमरे के पश्चिम की तरफ एक दरवाज़ा है जो बाथरूम को जाता है। यह आउट हाउस मिस्टर मनोहरसिंह के बँगले का एकांत भाग है।

मनोहरसिंह तीस वर्ष का एक व्यक्ति, दुहरा शरीर, चौड़ी छाती, नुकीली और तनी हुई मूँछें, बड़ी-बड़ी और शरारत-भरी आँखें, चौड़ा माथा। अक्सर निक्कर, ऊँचे मोजे, फुल-बूट और खाकी कमीज में दिखाई देता है। जब चलता है तो धीरे-धीरे और चुप-चाप। बाहर से मौन और हृदय में अपने ध्येय के प्रति सजग। वह खुफिया विभाग में सरकारी अफसर है। मनोहर सिगरेट का शौकीन है। कभी-कभी पाइप भी पीता है।

उसकी पत्नी वीणा पच्चीस वर्ष की तरुणी; लम्बा, गोरा शरीर, सुन्दर और आकर्षक आँखें। ठोड़ी उठी हुई जो उसके विचारों की दृढ़ता का परिचय देती है। चौड़ा गोल मुख। प्रायः साड़ी पहने रहती है।

पैरों में चप्पल, अँग्रेज़ी की ऊँची शिक्षा पाए हुए। हाथ में कोई-न-कोई अखवार या पुस्तक।

इस समय वरामदे में उसी की उम्र का एक युवक दिवाकर पैर फैलाए आरामकुर्सी पर बैठा है। उदास, म्लान, उतरा हुआ चेहरा। वार-वार उसे खाँसी उठती है। दिवाकर स्वभाव से उग्र, निर्भय, इकहरे वदन का व्यक्ति है। विखरे हुए वाल। उभरा हुआ माथा, जिस पर चिन्ता की रेखाएँ दिखाई दे रही हैं। लम्वी आर्यन कट नाक, वड़ी-वड़ी आँखें जो भौंहों के वालों से ढकी रहती हैं। खुरदरी और तेज आवाज़। फिर भी चेहरे पर एक प्रकार का तेज है। स्वभाव से सजग और फुर्तीला। इस समय वह मैली कमीज और पतलून पहने है। हाथ में एक अखवार है। किन्तु मालूम होता है अखवार के ऊपर उसका उतना ध्यान नहीं है और वह अन्तर्मुख होकर कुछ सोच रहा है। फिर कभी अखवार देखने लगता है। खाँसी आने पर जेब से दवा की पुड़िया निकालकर एक टिकिया मुंह में रख लेता है।

मनोहरसिंह उसकी वाईं ओर एक कुरसी पर बैठा उसकी हालत देख रहा है। जव उसे खाँसी आती है तव दिवाकर की दशा देखकर जैसे मनोहर की आँखों में भावुकता छा जाती है। वह दिवाकर की पीठ पर हाथ फेरने लगता है। फिर अपने पूर्व रूप में तनकर बैठ जाता है।

समय प्रातःकाल ६ वजे। एक नौकर आता है।]

मनोहर : (उसी गम्भीरता से) क्या कहा ?

घाँधू : दस वजे मरीज़ों को देखकर आएँगे। पूछ रहे थे कौन वीमार है।

मनोहर : (नौकर की ओर देखते हुए) फिर ?

धाँधू : मैंने कह दिया साहब के कोई मेहमान हैं, वही बीमार हैं।

मनोहर : दस बजे। (स्वतः) मैं तो इससे पहले ही चला जाऊँगा। (इशारे से) चाय ले आ। (दिवाकर से) ओवल्टीन डालकर एक प्याला चाय पी लो या एक अण्डा ले लो।

दिवाकर : चाय पी लूँगा। आमलेट बनवा लो या उबला हुआ अण्डा भी ठीक रहेगा।

मनोहर : (नौकर से) सुन लिया, जा जल्दी से ले आ।

धाँधू : जी अच्छा। (चला जाता है।)

दिवाकर : (मनोहर की ओर तीखी निगाह से देखता हुआ) जब आग और पानी इकट्ठे हो जाते हैं मनोहर, तब पानी की भाप बन जाती है, और आग की शक्ति भी क्षीण हो जाती है। दोनों ही बदल जाते हैं। पर पानी ही ज्यादा बदलता है।

[मनोहर सुनता रहता है और जवाब देने के बदले एक सिगरेट सुलगा लेता है। ज़ोर से एक बार धुआँ ऊपर को छोड़ देता है।]

दिवाकर : क्या तुम मेरी बात को धुएँ की तरह उड़ा देना चाहते हो ? नहीं, यह नहीं हो सकता। तुम मेरे यूनिवर्सिटी के दोस्त हो। इस बीच में नदी की अलग धार की तरह समय का चौड़ा टापू बन गया है। आदतें बदल गई हैं। हमारे उद्देश्य भी भिन्न हो गए हैं। बोलो, क्या कहते हो ? अपने हाथ जलाकर दूसरे के लिए आग तैयार करना शायद तुम्हारे शास्त्र में कोई बुद्धिमानी नहीं है। (पैर सिकोड़कर सीधा बैठ जाता है। जैसे मनोहर के अन्तरंग को पढ़ रहा हो। अखबार ज़ोर से कुरसी के हत्थे से मार कर खड़ा हो जाता है।) अब भी मैं

तुम्हारी कैद में हूँ।

मनोहर : (एक कश खींचकर हल्के से मुस्कराता हुआ) प्रेम की कैद में। जब अच्छे हो जाओ तब चले जाना। मुझे कोई आपत्ति न होगी। आखिर मैं भी तो···

दिवाकर : लेकिन तुम्हारा पेशा और इन्सानियत नदी के किनारे की तरह क्या कभी मिल सके हैं ?

मनोहर : मेरी कमज़ोरी ही समझ लो।

दिवाकर : कमजोरी मान लेने पर भी विश्वास दृढ़ नहीं रहता मनोहर। मेरा तो खयाल है तुम व्यर्थ की मुसीबत मोल मत लो, मुझे जाने दो। हमारी आठ-दस साल की गहराई इस मिलन को पाकर भर गई, यही क्या काफी नहीं है ? मैं ऐसे भी चला जाऊँगा। जब पैर काम नहीं देंगे तो साँसों से चलूँगा, आँखों से दूरी नापूँगा और कानों से तुम लोगों से दूर रहने की कोशिश करूँगा। (हँसता है।) क्या कहते हो ?

मनोहर : (मुस्कराकर) और तभी हम लोग अक्ल की नाक से सूँघना शुरू कर देते हैं। खैर, जाने दो, डाक्टर आ रहा है। (कश लेकर) तुमने सचमुच अपनी ज़िन्दगी खराब कर ली। इतने इण्टैलिजेण्ट···

दिवाकर : यह क्यों नहीं कहते कि ज़िन्दगी सुधार ली। क्रान्ति भरे पेटों को नहीं अपनाती। वह पीड़ा, अभाव के खेत में उगता है, असन्तोष से बढ़ती है और नाश से फलती-फूलती है। ज्वालामुखी फटने के लिए पहाड़ का होना ज़रूरी है। (खाँसता है।) फिर तो···फिर तो कोई नहीं बचता, सभी आग बन जाते हैं—बन-उपवन, झाड़-झंखाड़ सभी। लेकिन एक बात है··· (बैठता है।)

[मनोहर एक कश खींचकर उसके मुँह की तरफ

देखता है ।]

दिवाकर : (खड़ा होता हुआ) बात यह है कि आग और पानी इकट्ठे नहीं रह सकते ।

मनोहर : (उसकी तरफ देखकर) इतना घबराने की क्या ज़रूरत है ? ठीक हो जाओ, चले जाना । मेरी-तुम्हारी लड़ाई तो रहेगी ही ।

दिवाकर : (कुरसी पर बैठता हुआ) ठीक है, मैं बीमार हूँ, तुम मेरे दोस्त हो । तुमने नौकरी की अपेक्षा मेरी मित्रता का खयाल किया ।

मनोहर : चाहता हूँ यह मेरी कमज़ोरी मुझ में बनी रहे ।

दिवाकर : और न रह पाई तो शायद वह तुम्हारे पेशे की मजबूरी होगी···खैर

मनोहर : चाय आ रही है । मुँह धो लो ।

[दिवाकर जाता है, वीणा आती है ।]

वीणा : (कुछ देर मनोहर को देखती रहकर) कौन है यह ?

मनोहर : क्यों ?

वीणा : पूछती हूँ । यह फटे हाल बीमार क्या मेरे ही घर आने को रह गया था, लोग देखेंगे तो···

मनोहर : सोचेंगे रानी के यहाँ फकीर का क्या काम ? पोज़ीशन के एकदम खिलाफ ! क्यों ?

वीणा : मुझे तो देखकर लगा कोई नौकर आया है—नया नौकर ।

मनोहर : मेरा एक पुराना दोस्त है ।

वीणा : (चौंककर) दोस्त ? मित्रता और दुश्मनी बरावर वालों में होती है ।

मनोहर : मैंने दया करके उसे जगह दी है ।

वीणा : (चौंककर) दया, क्या हमारा घर अनाथालय है ? तुम

तो ऐसे कभी न थे। आजीवन शराव की नदी में सौंदर्य की नाव पर विहार करने वाले के लिए दया, कुछ नई बात सुन रही हूँ।

मनोहर : तुम ठीक कहती हो, मैं खुद हैरान हूँ।

वीणा : यदि कोई नया गुल न खिलने वाला हो तो हैरानी मुझे भी कम नहीं है। सुनो, मैं इसकी सेवा नहीं कर सकती।

मनोहर : मैंने वचन दिया है।

वीणा : यह दूसरा आश्चर्य है। आखिर पुलिस के अफसर के, यहाँ जिसका वचन हवा की तरह है और ईमान साँझ की धूप की तरह···

मनोहर : (कड़ककर) क्या तुम मुझे आदमी नहीं समझतीं? मैं जानता हूँ तुम मुझसे घृणा करती हो। क्योंकि मैं शराव पीता हूँ और···

वीणा : फिर भी थोड़ी-सी सुलगती आग ने तुम्हें मेरा पति वना दिया है। आग वुझ जाने पर भी उसकी जलन अमिट है, मनोहर!

मनोहर : (गरजकर) याद रखो मुझे तुम-सी कई मिल सकती हैं। (पीठ थपथपाकर) रानी, वुरा न मानना!

वीणा : (संयम से) पर मैं तो सोच भी नहीं सकती।

मनोहर : तो जैसा मैं कहता हूँ करो। यह मेरा दोस्त है। इसको कष्ट न हो। हाँ, किसका टेलीफोन था?

वीणा : (हृदय की ठेस सहलाकर ऊपरी मन से) मि० ट्यूडर का, वुला रहे हैं।

मनोहर : कह देतीं, नहीं हैं।

वीणा : शायद कोई ज़रूरी काम होगा। मैं क्या जानती थी, कह दिया, आ रहे हैं।

[मनोहर उठकर चला जाता है। वीणा उसकी कुरसी पर बैठ जाती है। हाथ में एक किताब है। किताब के पन्ने उलटती है। मन नहीं लगता। दिवाकर आता है। वीणा जैसे उससे बात करना चाहती है, लेकिन संकोच है।]

दिवाकर : (अखबार उठाकर, कुरसी पर सीधा बैठता हुआ) मैं मनोहर का मित्र हूँ। उसका यूनिवर्सिटी का मित्र।

वीणा : अच्छा, लेकिन आजकल आप बीमार हैं। कब से भला ?

दिवाकर : बीमारी मोल लेने नहीं जाना पड़ा। बलात् मैंने उसे बुला लिया है। जब आदमी नदी में तैरने लगता है तो जैसे ठंडे पानी से देह काँपने लगती है।

वीणा : (कुछ न समझकर) जी !

[नौकर चाय लेकर आता है और कमरे से मेज़ लाकर सामान रख देता है। वीणा चाय तैयार करके प्याला देती है।]

दिवाकर : आज बहुत दिनों बाद इतनी फुरसत से चाय पी रहा हूँ और बहुत दिनों बाद इतनी बेचैनी से भी।

[वीणा बात न समझकर किताब के पन्ने उलटने लगती है और उचटती निगाह से दिवाकर की तरफ देखती है। दिवाकर अण्डा खाने लगता है।]

दिवाकर : आप भी लीजिए न।

वीणा : जी, कुछ और नहीं लीजिएगा ? टोस्ट, मक्खन, शहद ?

दिवाकर : नो, थैंक्यू। यही काफी है। मनोहर चुप्पा है, लेकिन शायद आदमी बुरा नहीं। यह ट्यूडर आजकल क्या है ?

वीणा : यहाँ की इण्टैलिजैन्स ब्रांच का इन्चार्ज। यही मनोहर का बॉस है।

दिवाकर : हूँ। कुछ नये आदमी भी पकड़े गए हैं? (चाय पीने लगता है।)

वीणा : रोज़ ही, और न पकड़े जाएँ तो पुलिस और ये इण्टैलिजैन्स वाले क्या करें? पर आजकल तो एक की ही तलाश है।

दिवाकर : (मुस्कराता हुआ) दिवाकर की?

वीणा : आपने कैसे जाना?

दिवाकर : (वात को टालता हुआ) कभी-कभी नाक से सूंघने की वजाय आँखों से सूँघना भी महत्त्व का होता है। (आराम से बैठकर) यह दिवाकर की तलाश इतनी तेज़ी से क्यों हो रही है?

वीणा : उसने कई अफसरों की हत्या की है। कानून तोड़कर सरकार को उलटना चाहा है। वह क्रान्तिकारी है, घोर क्रान्तिकारी! अभी-अभी डाइनामाइट से रेल का पुल उड़ा दिया।

दिवाकर : (आश्चर्य से) अच्छा!

वीणा : और भी वहुत से अपराध उसने किए हैं। मैंने तो···

मनोहर : (नेपथ्य से) मैं अभी आया, वीणा! डाक्टर के आने से पहले आ जाऊँगा।

दिवाकर : (कुछ देर चुप रहकर) क्या वाकई?

वीणा : उस के खिलाफ और भी कुछ होगा, बड़ा भयंकर है वह। पाँच हज़ार का इनाम है उसे पकड़ने के लिए।

दिवाकर : (ऊपरी मन से) यह अच्छा है। जो कोई भी उसे पकड़ेगा उसे पाँच हज़ार मिलेंगे। क्या वुरा है? (वीणा की तरफ देखता हुआ) तव तो वड़ा खौफनाक है वह।

आपका क्या खयाल है ?

वीणा : यही कि वह बुरा आदमी है।

दिवाकर : क्या आप समझती हैं कि यदि मि० मनोहर उन्हें पकड़ लें तो उन्हें भी पाँच हज़ार का इनाम मिलेगा ?

वीणा : वह दिन बड़ी खुशी का होगा। तरक्की होगी सो अलग। आप आराम करेंगे ?

दिवाकर : (कुछ देर चुप रहकर) मनोहर मेरे यूनिवर्सिटी के साथी हैं। हम दोनों साथ-साथ पढ़े हैं।

वीणा : यह कह रहे थे, आप···

दिवाकर : दिवाकर भी हम लोगों के साथ पढ़ा करता था।

वीणा : (अब तक ऊब रही थी। केवल अतिथि का खयाल करके उठते हुए भी बैठ जाती है। 'दिवाकर' नाम सुन-कर उत्सुक हो उठती है।) दिवाकर ! तो क्या वह पढ़ा-लिखा भी है ?

दिवाकर : पोलिटिकल साइन्स में उसने एम० ए० किया है।

वीणा : तो वह सरकार के खिलाफ काम क्यों करता है, इतना पढ़ा-लिखा होकर ?

दिवाकर : चाहता तो उसे भी मनोहर जैसी या इससे अच्छी नौकरी मिल सकती थी।

वीणा : (भौंहें चढ़ाकर) मैं ऐसे आदमियों को बिलकुल नापसन्द करती हूँ।

दिवाकर : ऐसे आदमी किसी की पसन्द पर नहीं चलते। ऐसे तो लोगों में पसन्द पैदा करते हैं।

वीणा : (तपाक से) क्या मतलब आपका ?

दिवाकर : (लापरवाही से) मतलब वही, जो आप अभी तक नहीं समझ पाईं। आखिर आप क्या समझती हैं ? कुछ लोग राह बनाते हैं बाकी लोग उस पर चलते हैं। ऐसे लोग

अपनी धुन के पक्के होते हैं। आपको किस नाम से पुकारूं ?

वीणा : मेरा नाम वीणा है। (वात वदलकर) लेकिन यह कोई धुन भी तो हो। देश-भक्ति के नाम पर हंगामा खड़ा करना, लोगों को तंग करना, लूटना, जान से मार देना, पुल उड़ाना, गिरोह बनाकर सरकार को उलटने की तैयारी करना।

दिवाकर : (खड़ा होकर लता के पत्ते छूता हुआ एक फूल तोड़ लेता है) नदी जब बहने लगती है तो उसके दोनों किनारे अपने-आप बन जाते हैं। कुछ ऐसे लोग भी होंगे जो दिवाकर की बात को पसन्द करते होंगे।

वीणा : आप इसे पसन्द करते हैं ?

दिवाकर : (लापरवाही से हँसता हुआ) मेरी पसन्द भी कोई गिनती में है ? मान लीजिए मैं पसन्द करता हूँ, तो क्या होगा ?

वीणा : (तुनक कर) मैं विश्वास नहीं करती। शायद ही कोई भला आदमी इसे पसन्द करेगा। आप मानेंगे, मेरे पति काफी पढ़े-लिखे हैं, फिर उन्हें भी यह वात पसन्द नहीं है।

दिवाकर : क्या आप यह नहीं मानतीं कि आपके पति ने अपना दिमाग, अपनी ताकत, अपनी सूझ-बूझ एक बड़ी ताकत के हाथ वेच दी है और उसके वदले में यह सुख, यह वैभव, यह आराम आपको मिला है !

वीणा : इस में कोई नई वात नहीं है। सभी तो ऐसा करते हैं। आप भी कहीं-न-कहीं नौकर होंगे ही ?

दिवाकर : (वात को वदलता हुआ) विलकुल विलकुल, यह आप सच कह रही हैं। लेकिन आप मानेंगी कि सरकार से

भी एक बड़ी ताकत है। वह है हमारा देश, हमारी मातृभूमि।

वीणा : मातृभूमि ! तो देशभक्ति का पेशा करते हैं आप ?

दिवाकर : (हँस कर) खूब, सचमुच देशभक्ति आजकल एक पेशा है जो प्लेटफार्म से पैदा होकर बैंक बैलेन्स में समाप्त होता है।

वीणा : (बात बदल कर) आपने तो देखा होगा कैसा आदमी है वह ? खूब तगड़ा मोटा, भयंकर होगा। हमारे पुलिस के आदमी उससे डरते हैं। कहते हैं पिस्तौल का निशाना उसका अचूक होता है।

[‘वीणा वीणा’ कहकर कोई आवाज लगाता है। वीणा उठकर चलने लगती है।]

मैं अभी आई। (चली जाती है।)

[बरामदे के दूसरे कोने पर वीणा और उसकी सखी कान्ता आती हैं। दिवाकर खाँसता-खाँसता बॉथरूम में चला जाता है।]

वीणा : अरे कान्ता, वहुत दिनों बाद देखा री ?

कान्ता : तुझे बुलाने आई हूँ। आज मेरा जन्मदिन है। शाम को पाँच वजे चाय, कुछ गाना-बजाना होगा। मैं चाहती हूँ तेरा डांस हो। सामान सब आ जाएगा। उनकी (पति की) भी इच्छा है। अपने उनको भी लेती आना, मैं उन्हें भी निमन्त्रण देने आई हूँ।

वीणा : मुश्किल है। इधर एक बीमार मेहमान है। उधर उन्हें काम भी है आजकल। ये लोग पकड़-धकड़ में लगे हुए हैं। कोशिश करूँगी।

कान्ता : नहीं, नहीं, जरूर आना। कौन मेहमान है ?

वीणा : कोई उनके पुराने दोस्त हैं। न जाने कहाँ से पकड़ लाए,

39851
21·6·1८

न कपड़े हैं, न विस्तर। शायद कपड़े चोरी चले गए हैं। जो भी हो वीमार हैं, वहुत वीमार।

कान्ता : (मेहमान की ओर दूर से देखती हुई) इन दोस्तों के मारे नाक में दम है। लेकिन ये तो वाकई वड़े फटे हाल हैं। तुम्हारे इस मेहमान की आँखें इतनी तेज हैं। खैर, तो तुम्हारा 'डांस' पक्का है। और भी लोग आ रहे हैं। इन अपने मेहमान को न ले आना कहीं। वड़े-वड़े आदमी आ रहे हैं।

वीणा : (तुनक कर) ग़रीव क्या आदमी नहीं होते ?

कान्ता : नहीं, तुझे जरूर आना होगा।

वीणा : अच्छा देखा जाएगा।

कान्ता : रात को खाना भी वहीं होगा। अच्छा, मैं चलूं। तेरे मेहमान कुछ अजीव-से हैं। वड़े घूर-घूर कर देख रहे थे। ऐसे आदमी मुझे वुरे लगते हैं।

वीणा : लेकिन मुझे तो नहीं लगते।

दिवाकर : (लौट कर) देखिए, मिसेज मनोहर··· (जोर से खाँसने लगता है। दोनों उधर देखती हैं।)

वीणा : (जरा आगे वढ़कर) क्या मुझसे कह रहे हैं, कहिए। बहुत खाँसी आती है आपको।

दिवाकर : (कुरसी पर बैठकर) मुझे पाजामा या धोती चाहिए ताकि ये कपड़े धो डालूँ, बहुत मैले हो गए हैं।

वीणा : धोती ? (संकोच से) ठहरिए। धाँधू, ओ धाँधू !

धाँधू : (आकर) जी !

वीणा : जरा, मेरे साथ आ। (कान्ता से) मैं अभी आई। (कमरे में चली जाती है।)

दिवाकर : (स्वतः) न जाने क्या होने वाला है। जीवन की साँसों से नई दुनिया सजाने चला था; पर अव तो साँसों का

भी भरोसा टूटता जा रहा है। मनुष्य भावनाओं का पुतला है। (रुककर) विचारों से जीवन बनता है, लेकिन देखता हूँ; जैसे गुलामी के भीतर से हँसी फूट रही है। जैसे सड़ांध भरे तालाव में कमल हँस रहा हो (थोड़ी देर के वाद) क्या एक चना भाड़ फोड़ सकता है ? (कुछ देर चुप रहकर) क्यों, एक सूर्य सारे जगत को प्रकाशित नहीं करता ? (खाँसने लगता है।)

कान्ता : वीणा, ओ वीणा ! देख तो।

दिवाकर : (कान्ता की ओर देखता हुआ) घवराइए मत, भीतर के तूफान बाहर निकल रहे हैं।

[वीणा दौड़ कर आती है। दिवाकर की दशा देखने लगती है।]

वीणा : कपड़े आप रहने दीजिए, मैं धुलवा दूंगी।

दिवाकर : (थोड़ी देर वाद) अव मैं ठीक हूँ, वीणा देवी। अक्सर साहस के काम की परीक्षा बीमारी और मौत की सूरत में आती है। मैं परीक्षा दे रहा हूँ न ?

वीणा : (कुछ भी न समझकर) आपको वड़ा कष्ट है।

दिवाकर : (हँसता हुआ) मुझे कोई कष्ट नहीं है। कष्ट सहने के लिए मरने से भी ज्यादा साहस की जरूरत है। आप अपनी सखी से बात कीजिए। मैं ठीक हूँ।

वीणा : ये कपड़े लीजिए।

[दिवाकर कपड़े लेकर बॉथरूम में चला जाता है।]

कान्ता : कौन हैं ये तुम्हारे मेहमान ? अपने-आप बोलते हैं, सवाल करते हैं और जवाव भी देते हैं। लगता है इनके भीतर वहुत कुछ है जो उवल-उबल आता है।

वीणा : तू सच कहती है। पर न जाने कौन हैं ये ? बुरे नहीं

लगते ।

कान्ता : (हँसकर) जो वुरे नहीं लगते वे ही एक दिन अच्छे लगने लगते हैं, वीणा। जरा सँभल कर रहियो। अच्छा, मैं चलूं।

वीणा : पगली !

[कान्ता जाती है। मनोहर प्रवेश करता है।]

यह तुम्हारे कैसे दोस्त हैं जी ?

मनोहर : क्यों, क्या वात है ?

वीणा : वैसे ही पूछती हूँ। आदमी असाधारण हैं।

मनोहर : (टालता हुआ) तुम इसको जानोगी तो दंग रह जाओगी। खैर, जाने दो। डाक्टर नहीं आया ?

वीणा : दंग रह जाओगी ? क्या मतलव ? फिर वताओ न कौन हैं ? डाक्टर अभी नहीं आया।

मनोहर : और वह कहाँ हैं ?

वीणा : वॉथरूम गए हैं। तुम उदास-से क्यों दिखाई दे रहे हो ?

मनोहर : (लम्वी साँस लेकर) कुछ नहीं, वीणा। कुछ नहीं। (हृदय के भाव भीतर ही दबाकर) मुझे शायद कुछ दिनों के लिए वाहर जाना पड़ेगा।

वीणा : क्यों, क्या दिवाकर को पकड़ने के लिए ?

मनोहर : साहव कहता है उसका पकड़ना निहायत जरूरी है। वह यहीं कहीं है।

वीणा : क्या यहीं इसी शहर में ? पर यह तो वताओ कि यह हैं कौन ? कपड़े भी नहीं हैं इनके पास।

मनोहर : कह तो दिया मेरा एक दोस्त है, मुसीबत में पड़ा हुआ, वस।

वीणा : नाम क्या है ? क्या करते हैं ? कुछ हम भी तो जानें ?

मनोहर : जाओ, डाक्टर को टेलीफोन करो।

[वीणा जाती है। दिवाकर आता है।]

दिवाकर : अब जरा तबियत हल्की हुई। आज एक महीने के बाद नहा रहा हूँ, मनोहर।

मनोहर : कपड़े रख दो, सुखवा दिए जाएँगे।

दिवाकर : (आराम कुरसी पर बैठकर) मैं भी एक सिगरेट पीऊँगा।

मनोहर : लो। लेकिन तुम्हें तो मैं पहली बार देख रहा हूँ पीते।

दिवाकर : (सिगरेट जलाकर एक कश खींचता हुआ) मनुष्य के भीतर शक्ति सीमित होती है। जब लगातार काम करना पड़ता है तब उसे बराबर बनाए रखने के लिए आदमी को उत्तेजक चीजों का सहारा लेना पड़ता है। 'ए यूजलेस लाइफ इज एन अर्ली डैथ।' काम ही तो जिन्दगी है। (खाँसता है।)

मनोहर : गुड। अरे फिर खाँसी उठी? (पास जाकर उसकी पीठ पर हाथ फेरता है) देह गरम है, फिर नहाए क्यों? (वीणा आती है) क्या कहा डाक्टर ने?

[दिवाकर को खाँसी जोर से उठ रही है।]

वीणा : डाक्टर चल दिया है, आता ही होगा। तुम जरा पीठ पर हाथ फेरो। मैं तब तक द्राक्षासव की एक खुराक लाती हूँ। लो, डाक्टर आ गए।

[डाक्टर आता है।]

मनोहर : आइए, डाक्टर!

डाक्टर : क्या बात है?

मनोहर : खाँसी बहुत आती है। कुछ देह भी गरम है। शायद बुखार हो। अभी नहा लिए।

[डाक्टर स्टेथस्कोप निकालकर पीठ, छाती देखता है। फिर थर्मामीटर मुँह में लगाता है।

नाड़ी की गति देखता है। फिर आँखें और हलक टटोलता है।]

डाक्टर : कौन हैं यह आपके ?

मनोहर : मेरे मित्र। इनको जल्दी ठीक हो जाना चाहिए, डाक्टर।

डाक्टर : हूँ। (चिन्तायुक्त मुद्रा में सोचता है।)

मनोहर : (घबराकर) क्या सीरियस है, थाइसिस ?

डाक्टर : अभी तो नहीं पर जल्दी हो सकती है। सिम्टम्स उभर रहे हैं। मालूम होता है काम से सारा शरीर टूट गया है। खुराक भी नहीं मिली। थकावट बहुत ज्यादा है। आराम की जरूरत है।

मनोहर : आप दवा दीजिए। आराम की व्यवस्था मैं कर दूंगा।

डाक्टर : मैं दवा दूंगा। खाँसी दूर हो जाएगी। आराम चाहिए। कम्पलीट रेस्ट। (डाक्टर नुस्खा लिखकर देता है) यह दवा मँगवा लीजिए। इस में ताकत की भी दवा है। जरा हवा से बचाइए। फलों का रस। दूध।

मनोहर : ठीक है। धाँधू (धाँधू आता है) जाकर दवा ले आ।

दिवाकर : क्या मुझे तपेदिक है, डाक्टर ? फिर मैं यहाँ नहीं रहूँगा। मैं चला जाऊँगा। शायद निकम्मेपन से भरी मेरी बुद्धिमानी ने मनोहर को मुग्ध कर दिया है। डेमागॉग्स एण्ड एजिटेटर्स आर वैरी अनप्लेजेण्ट, वट दे आर इन्सीडेण्ट टू ए कण्ट्री लाइक दिस। आई एम एन एक्सीडेण्ट, डाक्टर।

डाक्टर : (उत्सुकता से) एक्सीडेण्ट ?

दिवाकर : (हँस कर) प्रत्येक वह व्यक्ति जो समाज से, सरकारी कानून से टकराता है एक्सीडेण्ट, दुर्घटना है।

डाक्टर : (मनोहर की तरफ देखकर) गुड। (दिवाकर से) ज़िन्दगी की हर मशीन को टकराने की जरूरत है, धक्का

लगाने की जरूरत है। आप आराम कीजिए।

दिवाकर : मेरे कोश में आराम लग्जरी है और काम उथल-पुथल, डाक्टर।

डाक्टर : गुड। आप तो फिलासफर मालूम होते हैं।

दिवाकर : मैं जो मालूम होता हूँ, वह नहीं हूँ और जो नहीं मालूम होता, वही हूँ। (हँसता है।)

डाक्टर : यानी ?

मनोहर : (डरकर) जाने दीजिये, डाक्टर, फिर कभी।

[हाथ पकड़कर डाक्टर को ले जाता है।]

वीणा : (पास आकर) सचमुच आपकी बातें बड़ी मजेदार हैं।

दिवाकर : और मैं ? (वीणा एकदम घबरा जाती है। दिवाकर पछताता हुआ-सा) क्षमा कीजिए, मैंने वैसे ही कह दिया।

वीणा : (भीतर-ही-भीतर उसकी प्रतिभा से प्रसन्न होकर) नहीं, नहीं। कोई बात नहीं।

दिवाकर : (आराम कुरसी पर बैठकर) मैं ज्यादा दिन नहीं रहूँगा।

[मनोहर आता है।]

मनोहर : (वीणा से) देखो, उधर कोई तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।

[वीणा जाती है।]

(दिवाकर से) तुम्हें आराम चाहिए। आराम करो।

दिवाकर : वह तो जब से मैं आया हूँ तभी से कर रहा हूँ, मनोहर, मुझे तुमसे एक बात कहनी है।

मनोहर : हाँ, कहो।

दिवाकर : साफ-साफ ही कहना होगा।

मनोहर : यदि यही बात है तो दुहराने की जरूरत नहीं है।

दिवाकर : लेकिन यह कितना बड़ा रिस्क है। मैं नहीं चाहता कि मेरी वजह से तुम किसी मुसीवत में पड़ो। मैं घोर क्रान्तिकारी हूँ, वागी हूँ, तुम्हारी सरकार की नज़र में। और वह किसी न किसी तरह पकड़कर हमेशा के लिए मुझे दफना देना चाहती है।

मनोहर : सही है।

दिवाकर : और तुम उस मशीन के पुर्जे हो। तुमसे भी यही आशा की जाती है कि मुझे पकड़कर उसके हवाले कर दो। इससे अच्छा कोई अवसर नहीं आएगा। वैसे भी मैं इस वीमारी से तंग आ गया हूँ।

मनोहर : (दिवाकर के कंधे पर हाथ रखकर) तुम मेरे दोस्त हो। मेरे साथी हो। उस पुलिया के पास अँधेरे में बुखार में वेहोश पड़े थे। पहले मेरे जी में आया कि मैं तुम्हें पकड़ कर ले चलूँ। पर मैंने नौकरी की है, मनुष्यता नहीं बेची। पहले मुझे मालूम भी नहीं था कि तुम ही मेरे साथी दिवाकर, क्रान्तिकारी हो। आज मुझे गर्व है।

दिवाकर : मैं कृतज्ञ हूँ। पर मैं चाहता हूँ कि तुम अपने पेशे के प्रति ईमानदार रहो। तुम मुझे पकड़वा दो। मैं काम पूरा नहीं कर सका। मैं तुम्हारी सरकार का तख्ता नहीं उलट सका। मैं जनता को सरकार के खिलाफ नहीं वना सका। फिर भी हमने एक जनमत तैयार कर दिया है। लोगों में नये समाज, नई दुनिया, नये तरीके की विचार-धारा पैदा कर दी है। आज वह समय आ गया है कि गदर के जमाने से अंग्रेज़ों के विरुद्ध प्रारम्भ किए विद्रोह को जारी रखें। (खाँसने लगता है।)

मनोहर : तुम वीमार हो, अच्छे हो जाओ, दिवाकर !

दिवाकर : क्या तुम्हारी भोली पत्नी वीणा जानती है मैं कौन हूँ ?

मनोहर : नहीं।

दिवाकर : लेकिन यह बात उससे छिपी नहीं रह सकती।

मनोहर : वह मुझसे डरती है। उसके जान लेने पर भी तुम्हारी हानि नहीं होगी।

मनोहर : क्या तुम नहीं जानते कि मुझे घर में रखकर तुम एक बड़ी गलती कर रहे हो? मैं तुम्हें नुकसान नहीं पहुँचाना चाहता, मनोहर।

दिवाकर : मैं तुम्हारे त्याग से प्रभावित हूँ, दिवाकर। तुम्हारे कष्ट देश के भले के लिए हैं। तुम देश की सेवा में मर रहे हो, जब कि मैं अपने पेट के लिए जी रहा हूँ। उस पुलिया के पास अँधेरे में बेहोश पड़ा देखकर पहले तुम्हें पकड़ लेने का ख्याल आया, लेकिन मेरी आत्मा ने मुझे धिक्कारा, मुझे एक धक्का-सा लगा। मैं चौंक उठा। मुझे लगा तुम्हें पकड़कर मैं अपने एक मित्र के साथ, देशभक्त के साथ दगा कर रहा हूँ। मैं खुद चाहता हूँ हम गुलामी की ज़ंजीर से छूट जाएँ।

दिवाकर : (मनोहर की आँखों में झाँककर) तब तुम्हें खुल्लम-खुल्ला मैदान में आ जाना चाहिए। (अखबार देखने लगता है।)

मनोहर : उसके लिए साहस चाहिए। उतना साहस मुझ में नहीं है। लेकिन मैं तुम्हारे काम में क्या सहायता की एक कड़ी नहीं बन सकता? मेरे मन में बड़ा संघर्ष हो रहा है। नेकी मुझे नोचती है। मेरा पेशा मुझ पर हावी हो रहा है।

[वीणा दौड़ी आती है। उस के हाथ में ऊन और सलाई है।]

वीणा : बड़े साहब का टेलीफोन आया था। पहले तो पूछा

मनोहर क्या कर रहे हैं। जव मैंने वताया कि वे वीमार मेहमान के पास हैं तो थोड़ी देर चुप रहकर बोले, 'उनसे कहना तैयार रहें। वागी इसी शहर में है। आज उसे ही पकड़ना है। नींद हराम कर दी है उस पाजी ने।'

दिवाकर : सचमुच ? सचमुच ?

वीणा : (दिवाकर से) आप नहीं जानते, पिछले छः महीनों से उसने सारे इलाके में तहलका मचा रखा है।

मनोहर : (दिवाकर की तरफ देखकर मुस्कराता है और वीणा के देखने पर गम्भीर हो जाता है) क्या बताएँ इन क्रान्तिकारियों के मारे नाक में दम है, साहव। पकड़ना ही होगा। इनाम के लालच में मुखविर दौड़-धूप भी काफी कर रहे हैं। (टेलीफोन की घंटी वजती है) जाओ वीणा, ज़रा सुनो।

वीणा : आप ही वताइए। मैं कहाँ तक जवाव दूंगी। ट्यूडर का टेलीफोन होगा।

मनोहर : अच्छा, मैं ही जाता हूँ। धाँधू अभी तक दवा लेकर नहीं लौटा ?

वीणा : आता ही होगा। (धाँधू आता है) लो, वह आ गया।

मनोहर : दवा दे दो। मैं अभी आया।

धाँधू : यह लीजिए दवा। (वीणा नुस्खा देखकर दवा देती है।)

वीणा : (दवा देती हुई) आप सोचते होंगे, "मैं अच्छा आया। मनोहर ठीक तरह से मेरे पास बैठ भी नहीं पाते।" क्या किया जाए, इस डिपार्टमेंट की नौकरी ही ऐसी है और उस पर इन क्रान्तिकारियों के मारे नाक में दम है। अजीव परेशानी है। दवा पी लीजिए। (देती है।)

दिवाकर : (भीतर-ही-भीतर मुस्कराकर) मुझे क्या असुविधा होगी, वीणा देवी ! यदि जीवन को बनाये रखना है तो काम को महत्त्व देना ही होगा।

वीणा : अरे धाँधू, देख, एक छोटी मेज़ उठा ला, उसी पर यह दवा की शीशी रख दे। दो-दो घंटे बाद दवा लेने को डाक्टर ने कहा है। हाँ, एक बात बताइए। (वहीं पास की कुरसी पर बैठकर) वह दिवाकर आपका तो क्लासफैलो रहा है। क्या मिस्टर मनोहर के साथ भी वह पढ़ा है ? (बुनने लगती है) तो उनका भी साथी ?

दिवाकर : (गम्भीर होकर) जहाँ तक मुझे याद है वह मनोहर को जानता है और अच्छी तरह से जानता है।

वीणा : तब तो यह और भी बुरी बात है। जब वह जानेगा कि यह वही हैं···

दिवाकर : (अखबार से पंखा करता हुआ) क्यों ? तब क्या होगा ? इससे तो फायदा ही है कि मनोहर उसे जल्दी पहचान लेंगे।

वीणा : (बुनते हुए) नहीं, नहीं, आप नहीं समझे ! वह बहुत बड़ा निशानेबाज भी तो है।

दिवाकर : निशानेबाज तो ज़रूर है। पिछले दिनों वह एक बार ऐसे ही घिर गया। चारों ओर पुलिस के आदमी, और वे दो एक पेड़ पर छिपे हुए थे कि घिर गए। कोई उपाय नहीं था। इसी समय दोनों रिवाल्वर लेकर पेड़ से दो तरफ कूद पड़े और चारों ओर फायर करते भाग गए। पुलिस वालों की हिम्मत ही नहीं हुई कि वे उनका पीछा करते। पास ही घना जंगल था। जंगल का तो दिवाकर शेर है।

वीणा : (बुनना बन्द करके) और वे दोनों भाग गए, इतनी

पुलिस के होते हुए भी ?

दिवाकर : (उसी तरह गम्भीरतापूर्वक वीणा को देखकर) हाँ !

वीणा : वह दूसरा कौन था ?

दिवाकर : उसका साथी, वल्कि गुरु, जिसने क्रान्तिकारी दल का निर्माण किया।

वीणा : स्वामी ?

दिवाकर : हाँ स्वामी। वे गेरुए कपड़े ज़रूर पहनते थे पर स्वामी नहीं थे। वैसे परम देशभक्त थे वह स्वामी।

वीणा : कृपा करके स्वामी के सम्वन्ध में मुझे वतलाइए। वह कौन थे, क्यों उन्होंने···

दिवाकर : वहुत तो मैं भी नहीं जानता, लेकिन सुना है वह कोई वहुत समृद्ध परिवार के लड़के थे। विलायत में पढ़ते थे। वहीं रहते उन्होंने सारे देश-विदेश घूम डाले। रूस, जापान, चीन, वर्मा सभी जगह उन्होंने विश्व-मानव-संस्था नाम की एक संस्था कायम की। फिर हिन्दुस्तान आए।

वीणा : (बुनना छोड़कर) विश्व-मानव-संस्था, यह क्या है ?

दिवाकर : एक ऐसी संस्था जो परतन्त्र देशों को दासता के वन्धन से मुक्त होने में सहायता दे।

वीणा : किस प्रकार की सहायता ?

दिवाकर : सभी तरह की। धन की, अस्त्र की, शस्त्र की। उन्होंने कोशिश की और हिन्दुस्तान में पिस्तौल, राइफल, वन्दूक से भरा हुआ एक जहाज भी भिजवाया, लेकिन दुर्भाग्य से वह वीच में ही रोक लिया गया। जाने दो, तुम जानो इन बातों में क्या धरा है। तुम पुलिस के लोग हो।

वीणा : मैं तो पुलिस की नहीं हूँ। मेरे पति पुलिस में नौकर

हैं। तो क्या आप समझते हैं कि मैंने भी अपने-आपको बेच दिया है। अगर कोई हर्ज न हो…

दिवाकर : क्रान्तिकारियों का काम आज का नहीं है, वीणा देवी। ग़दर के समय से यहाँ के लोग स्वतन्त्रता पाने की चेष्टा करते रहे हैं—हिन्दू, मुसलमान सभी। पराधीनता मनुष्य का अभिशाप है न ?

वीणा : (मन में अन्तिम वाक्य सोचते हुए) आपकी बात सुनकर मेरे भीतर एक उफान-सा आता है।

दिवाकर : इसलिए कि तुम्हारी आत्मा भी स्वतन्त्रता के लिए छटपटाती है। उसमें भी देशभक्ति के बीज हैं।

वीणा : न जाने किस लिए पर, कभी-कभी भीतर-ही-भीतर कुछ होता है। फिर स्वामी ने क्या किया ?

दिवाकर : जब वह देश में आए और उन्होंने यहाँ की गरीबी, लोगों की भुखमरी, अज्ञान, अविद्या देखी तो उनका हृदय फूट-फूटकर रोने लगा और तभी दूने उत्साह और साहस से उन्होंने काम करना शुरू कर दिया। देश-भर में घूम-घूमकर लोगों को समझाया और उन्हें उत्साहित किया।

वीणा : (उत्तरंग होकर) बड़ा काम किया उन्होंने।

दिवाकर : तब सरकार ने उन्हें जेल में डाल दिया, एक भाषण पर सात साल के लिए। एक दिन वह जेल से भाग गए और छिपकर काम करने लगे। उन्हीं दिनों दिवाकर ताजा-ताजा एम० ए० पास करके निकला था। उसका विवाह तो हो ही चुका था। वह उनके दल में शामिल हो गया। और भी बहुत लोग थे। यह स्वामी का ही प्रभाव था कि कई जगह फौजें बिगड़ उठीं, कई जगह विद्रोह हुए। किन्तु दुर्भाग्य कि उन लोगों को पूरी सफ-

लता नहीं मिली। एक सेना को दूसरी सेना से दवा दिया गया। कार्यकर्ताओं को गोली से उड़ा दिया गया।

वीणा : ये वगावत की वातें मैंने सुनी हैं। तो क्या यह उन स्वामी का ही काम था ?

दिवाकर : काम करने वालों की एक कड़ी थी। स्वामी उनमें प्रमुख थे। परम विद्रोही स्वामी को आज लोग देवता की तरह पूजते हैं और सरकारी नज़रों में वह थे एक भयानक डाकू। (खाँसने लगता है।)

वीणा : वड़ा कष्ट होता है आपको, जाने दीजिए, जाने दीजिए।

दिवाकर : ठ···ह···रि···ए··· (खाँसी रुकने पर) आज भी लोग जव उनका स्मरण करते हैं तो हृदय पवित्र हो जाता है वीणा देवी। कितने महान् थे वह ! अन्तिम दिनों में··· (खाँसी)

वीणा : हाँ, अन्तिम दिनों में क्या हुआ ? पर रहने दीजिए, आपको कष्ट होता है।

दिवाकर : अन्तिम दिनों में वह वीमार हो गए। दमा का ज़ोर वढ़ गया। हरिद्वार से ऊपर एक वन में वह रहने लगे और एक दिन पुलिस ने उन्हें घेर लिया। जम कर लड़ाई हुई। वहुत से पुलिस के आदमी मारे गए। उनके साथी भी शहीद हुए। दूसरी वार फिर पुलिस ने आक्रमण किया। दो अफसरों को मारकर स्वयं एक गोली से मारे गए, जीते-जी हाथ नहीं आए। वह कहा करते थे, "मैं आजीवन गोलियों से खेलता रहा हूँ। गोली ही मेरे प्राण लेगी।"

वीणा : (उत्सुकता से) तो क्या आप भी उनके साथ थे उस समय ? आपकी वातों से तो ऐसा ही लगता है।

दिवाकर : (जैसे पकड़ा गया हो) नहीं, नहीं, यह सब मैंने दिवाकर से ही एक बार सुना था।

वीणा : दिवाकर से ? तो क्या आप दिवाकर से मिलते रहते हैं ?

दिवाकर : बहुत दिन हुए एक बार अचानक एक जगह भेंट हो गई। मैं चाहता था कि उससे बात न करूँ, उससे न मिलूं।

वीणा : (सोचती हुई) तो बुराई क्या है ? आखिर वे लोग देशभक्त भी तो किसी से कम नहीं। (मन-ही-मन कुछ बड़बड़ाती है।)

[दिवाकर चुप होकर वीणा की ओर देखता है। वीणा लम्वी साँस लेकर बुनती रहती है। नज़र उठाकर दिवाकर को देखना चाहती है कि दिवाकर की दृष्टि वीणा पर पड़ती है। वीणा नीची निगाह कर लेती है।]

वीणा : कितने आफत के पुतले हैं ये लोग ! आग से खेलते हैं, आग से।

[दिवाकर एकदम ध्यानस्थ-सा होकर ऊपर की तरफ एकटक देखने लगता है। आँखें तेज़ हो जाती हैं और धीरे-धीरे उनमें से आग-सी निकलने लगती है। होंठ फड़कने लगते हैं। वीणा दिवाकर की यह चेष्टा और यह रूप देखती है। बुनना बन्द करके पास आती है।]

यह क्या हो गया आपको ?

दिवाकर : (देर तक चुप रहने के बाद) कुछ नहीं, कुछ नहीं। सोचता था जीवन के जो कई रूप हैं क्या उनमें हमारे जीवन का भी कोई अर्थ है ? हम भी जीते हैं, साँस

लेते हैं। तो यह जीना क्या अर्थ रखता है ?

[इसी समय मनोहर का एक दोस्त लकड़ी घुमाता आता है। रामपुरी काली मखमली टोपी, वायल का कुर्ता, ढीला पाजामा, पम्प शू, उम्र तीस साल, रंग साँवला, शरीर वलिष्ठ, शराव का पैग चढ़ाए हुए, नाम चुन्नीसिंह, मुँह में पान भरा हुआ।]

चुन्नीसिंह : कहाँ गए मि० मनोहरसिंह ? (इतना कहकर विना कहे दिवाकर के सामने की एक कुर्सी पर जम जाता है। वीणा के जवाव देने से पहले) गए होंगे उसी चक्कर में—क्यों ?

वीणा : जी ?

चुन्नीसिंह : यह साला काम भी क्या है। न दिन न रात, मनोहर चढ़े वरात। उसी चक्कर में होंगे ? हम भी तो हैं साले, घोड़े की पीठ पर सवार। लेकिन काम उतना करते हैं कि आँच न आए। सव वदमाशों को अगर आज ही पकड़ लें तो कल क्या करें। मरने के लिए थोड़े आए हैं, मियाँ। नौकरी करने और हुकूमत करने आए हैं। सोचा था कुछ गपशप होगी। लेकिन हज़रत गायव हैं।

दिवाकर : मैं मनोहर का दोस्त हूँ।

चुन्नीसिंह : दुश्मन तो मैं भी नहीं हूँ, जनाव।

दिवाकर : तो इससे यह कैसे सावित हो गया कि मैं दोस्त नहीं हूँ। दोस्त और दुश्मन के वीच में एक और वर्ग है। जैसे रात और दिन के वीच में साँझ। आदमी और जानवर के वीच में वनमानस।

चुन्नीसिंह : (ठहाका मारकर) खूव ! जैसे आदमी और परिन्दों के वीच में तोता।

दिवाकर : जो हमेशा दूसरों की बोली बोलता है।

चुन्नीसिंह : खुदा कसम दिल तो करता है कहीं इनको पकड़ पाऊँ तो वहीं गोली से उड़ा दूँ। न हुआ मैं मनोहर की जगह (मूँछों पर ताव देता है।)

दिवाकर : शायद उनके मन में भी यही खयाल आते होंगे कि मौका पाएँ तो एक-एक को गोली से उड़ा दें।

चुन्नीसिंह : लेकिन वह तो बदमाश है न? चोर को क्या हक है कि वह पुलिस पर छा जाने की बात सोचे। डाकू डाके के सिवा और क्या सोच सकता है?

दिवाकर : जैसे पुलिस दबदबा और अत्याचार करने के सिवा और कुछ नहीं सोच सकती।

चुन्नीसिंह : (होश में आकर) क्या कहा आपने?

[वीणा घबराती है। वह जान नहीं पाती कि यह कैसा आदमी है।]

दिवाकर : कोई खास बात तो नहीं कही।

चुन्नीसिंह : (कुछ देर चुप रहकर) तो क्या आप कुछ बीमार हैं? शायद आपको दमे का रोग है। यह दमा भी खूब है साहब, कतई नामाकूल बीमारी।

वीणा : चाय पीएँगे?

चुन्नीसिंह : वीणा, तुम भी खूब हो। अरे, चाय भी कोई पीने की चीज़ है। अभी दो पैग चढ़ाकर आया हूँ। रात को एक डकैती के मामले में बाहर जाना पड़ा। ठीक बारह घंटे बाद मैं सिपाहियों को लेकर पहुँचा, ताकि डाकुओं का कहीं नाम-निशान भी न रहे। तफ्तीश की, इधर-उधर दो-चार को झाड़-झपट की। कुछ को पीटा-पाटा। अब कानूनी कार्रवाई होगी। मरते रहें साले, हमने कौन इनकी ज़िन्दगी का ठेका ले रखा है।

दिवाकर : (चुन्नीसिंह की ओर देखकर) कानून मकड़ी के जाले की तरह है। जिसमें गरीव और कमज़ोर ही ज़्यादा फँसते हैं और ताकतवर रुपये के चाकू से जाला फाड़कर भाग जाते हैं। शायद मैं गलत नहीं कह रहा हूँ।

चुन्नीसिंह : तुम ठीक कहते हो। कानून के पहाड़ को उड़ाने वाला एक ही डाइनामाइट है—रुपया। जिसके पास रुपया नहीं है वही कमज़ोर है। आपके पास रुपया है तो खून करके भी वच सकते हैं।

दिवाकर : आपका मतलव रिश्वत से है शायद।

चुन्नीसिंह : मेरा मतलव सिर्फ रुपये से है। समझे आप? रुपये से वड़े-से-वड़ा दिमाग खरीदा जा सकता है और ईमान भी। ईमान की वड़ी-वड़ी दीवारें रुपये के हथौड़े की चोट से गिर जाती हैं। आज ही पाँच सौ की वौनी हुई।

दिवाकर : तो क्या आप पुलिस इन्स्पेक्टर हैं?

चुन्नीसिंह : (लापरवाही से) जी जनाव! क्या आपको अभी तक नहीं मालूम हुआ? चोर और गुण्डों को तो हम सूंघकर पहचान लेते हैं। आजकल आप क्या काम करते हैं?

दिवाकर : आज तो वीमार हूँ और मनोहर का मेहमान। कल ठीक होने पर सोचूंगा क्या करता हूँ।

चुन्नीसिंह : (चौकन्ना होकर) इससे पहले?

दिवाकर : इससे पहले कानून से लड़ता था।

चुन्नीसिंह : (वात न समझकर) वकील थे आप? (हँसता है) वकील भी अजीव किस्म का जानवर है?

वीणा : वकील?

चुन्नीसिंह : वकील उस हलवाई की तरह है जो पैसा पाकर ही अक्ल की मिठाई वेचता है। झूठ को सच और सच को

झूठ वनाता है। बाज़ारू औरत की तरह चालाकी का सौदा करने वाला।

दिवाकर : और पुलिस ?

चुन्नीसिंह : पुलिस खानापूरी का महकमा है। यानी पूरी खाने का महकमा। (हँसता है) नहीं, नहीं, हम लोग हैं न्याय की प्रतिष्ठा के लिए, राज में शान्ति के लिए। हम न हों तो लोग एक-दूसरे को खा जाएँ।

दिवाकर : जव लोग एक दूसरे को नहीं खाते तो आप उन्हें खाते हैं।

चुन्नीसिंह : वह तो चलता ही है। आखिर न खाएँ तो काम कैसे चले ? (घूमता है) ईमानदारी को मैं सफेद पोशाक की तरह मानता हूँ, जो बाहर दिखाने के लिए जरूरी है। विना ईमानदारी की पोशाक पहने आप वेईमानी का कोई काम नहीं कर सकते। और बेईमानी के बगैर आप दुनिया में आराम, इज्जत से नहीं रह सकते। मान लीजिए, मैं डेढ़ सौ रुपया पाता हूँ। अब आजकल, डेढ़ सौ में होता ही क्या है ? वीवी है, बच्चे हैं, उनकी पढ़ाई-लिखाई, शादी और ऊपरी खर्च कहाँ से चले। डेढ़ सौ की तो मैं शराब ही पी जाता हूँ। फिर यार-दोस्त आए-गए, जश्नमहफिल अलग। कैसे काम चले ?

[एक आदमी आता है]

आगन्तुक : (चुन्नीसिंह से) सरकार, वह बनिया आया है।

चुन्नीसिंह : अवे, कौन वनिया ?

आगन्तुक : जिसके घर डाका पड़ा था। (पास जाकर कान में कुछ कहता है।)

चुन्नीसिंह : अच्छा, मुर्गी मोटी है! चल! (वीणा से) मैं यह जानने के लिए आया था कि उस दिवाकर का क्या

हुआ ? मैंने उसका फोटो देखा है। वड़ा फितना आदमी है। तेज आँखें, चौड़ी पेशानी, लम्वी नाक, उभरी हुई ठोड़ी, कद मामूली, पतला-दुवला, सुना है अचूक निशानेवाज है।

वीणा : कह दूंगी।

[नौकर पान लाकर देता है। चुन्नीसिह पान खाकर चला जाता है। उसके पीछे दिवाकर भी अन्दर चला जाता है।]

वीणा : (स्वतः) वड़ी विचित्र वात है। कुछ समझ में नहीं आता कौन है यह ? तेज आँखें, चौड़ी पेशानी, लम्वी नाक, उभरी हुई ठोड़ी, कद मामूली, पतले-दुवले। तो क्या यही दिवाकर हैं ? देशभक्त और त्याग की मूर्ति दिवाकर ? नहीं, यह नहीं हो सकता। मनोहर इतना देशभक्त नहीं हो सकता। वह हाथ में आए हुए शिकार को छोड़ नहीं सकता। लेकिन यह अजीव वात है। बिलकुल अजीब। यह आदमी मामूली नहीं है। अवश्य इस आदमी का कोई सम्वन्ध उन लोगों से होगा। मेरा खयाल है मैं गलती नहीं कर रही हूँ। यही है। इन्होंने अभी तक मुझे अपना नाम भी नहीं वताया। स्वामी के सम्बन्ध की इनकी वातें ! (सोचकर) मनोहर ने यह क्या किया ? तो क्या घर में ही साँप। नहीं, मैं इसे साँप नहीं कहना चाहती। वहादुर देश-भक्त ! कितना कष्ट सहा है इसने। जिन्दगी वरवाद कर दी। अपने लिए क्या किया ? न जाने वीवी की क्या हालत होगी ! आठ-आठ आँसू रोती होगी वेचारी। कौन है यह ? जानना ही होगा। न जाने मनोहर ने क्या सोचा है ?

[मनोहर प्रवेश करता है।]

वीणा : (भर्राई हुई आवाज में) मनोहर !

मनोहर : क्या है, वीणा ? अरे दिवा··· मेहमान की तकलीफ बढ़ गई क्या ?

वीणा : (आगे बढ़कर) यह तुमने क्या नाम लिया, दिवाकर ?

मनोहर : (घबराहट दबाकर) नहीं तो। दिवाकर यहाँ कहाँ से आया ?

वीणा : नहीं, नहीं, यही दिवाकर है। सत्य ज्वालामुखी के समान है जो असत्य के कपट के पहाड़ फोड़कर निकलता है।

मनोहर : (स्वाभाविक लापरवाही से) नहीं, नहीं, वीणा, तुम्हें भ्रम हुआ है। दिवाकर यह नहीं है। हम लोग आज रात उसे पकड़ने जा रहे हैं। आजकल दिवाकर ही दिमाग में घूम रहा है।

वीणा : मुझसे उड़ो मत मनोहर। यही वह दिवाकर है, तुम्हारा यूनिवर्सिटी का दोस्त। अभी दरोगा चुन्नीसिंह आए थे। उन्होंने भी यही हुलिया बतलाया।

मनोहर : उसे कैसे मालूम ?

वीणा : शायद उन्होंने दिवाकर की तसवीर देखी है।

मनोहर : (कुछ सोचता हुआ) कहाँ गए ?

वीणा : बॉथरूम। लेकिन तुमने यह क्या किया ? हम लोग कहीं के न रहेंगे।

मनोहर : (उसी शान्त भाव से) घबराने की कोई बात नहीं है। हिम्मत रखो, वीणा।

वीणा : (परखने के भाव से) मुझे कुछ दिखाई नहीं देता। हम लोग कहीं के न रहेंगे। हमारा घर जेलखाना होगा। तुम ने मुझे बताया क्यों नहीं ? घर में आग लगाकर

दूसरों के लिए उजाला कोई नहीं करता। यह आज नहीं तो कल जरूर पकड़े जाएँगे।

मनोहर : तुमसे क्या छिपाव है, वीणा ! मेरे भीतर एक संघर्ष उठ रहा है। एक तरफ स्वर्ग है दूसरी तरफ मौत। (कुछ सोचकर) लेकिन उस मौत में भी मुझे खुशी की एक चमक दिखाई देती है। यही चमक मैं दिवाकर के चेहरे पर देखता हूँ। इसके साथ ही कमज़ोरी मुझे बार-बार नोचती है। मैं शायद जीवन की इतनी गहराई में कभी नहीं गया। मैं इतना बड़ा त्याग नहीं कर सकता। तुम्हें दर-बदर भिखारिन की तरह भीख माँगते नहीं देख सकता। नहीं, वह हमारा रास्ता नहीं है। कुछ सिर-फिरे ही यह काम कर सकते हैं। मेरे मन में तूफान उठ रहा है। मैं सोच नहीं पाता कि क्या करूँ।

वीणा : इन्हें चुपचाप विदा कर दो।

मनोहर : लेकिन यह बात छिप नहीं सकती। दिवाकर के पकड़े जाने पर चुन्नीसिंह ही बतला देगा कि उसने दिवाकर को मेरे घर देखा है।

वीणा : फिर ?

मनोहर : (एकदम उछलकर) मैं सोचता हूँ क्यों न इसे गोली मार दूँ।

वीणा : यह क्या कह रहे हो ?

मनोहर : कह दूँगा दिवाकर को मैं फुसलाकर ले आया और जब उसे शक हुआ उसने गोली चलाई तब मैंने उसे मार दिया।

वीणा : यदि तुम दिवाकर को छोड़ दो तो वह आसानी से नहीं पकड़े जाएँगे। दिवाकर देवता हैं।

मनोहर : (सोचकर) मैं देवता, राक्षस कुछ भी नहीं जानता।

मेरी गलती का प्रायश्चित्त यही है कि मैं उसे···

वीणा : नहीं, नहीं, तुम ऐसा क्यों करोगे ? ऐसा मत करो, मनोहर । क्या तुम देवता की हत्या करोगे ?

मनोहर : मुझे इनाम मिलेगा । अभी-अभी ट्यूडर ने मुझसे कहा है कि वह छुट्टी पर जा रहा है—शायद लम्बी छुट्टी पर । अगर उस समय तक दिवाकर पकड़ा गया तो उसकी जगह मेरी नियुक्ति होगी । तरक्की होगी, ऊँचा ओहदा मिलेगा । ऐसा मौका बार-बार हाथ नहीं आता रानी !

[वीणा गुम-सुम सी खड़ी रह जाती है । मनोहर टहलता हुआ तर्क-वितर्क करता है ।]

मनोहर : यही मेरा निश्चय है वीणा ! आज रात को ।

[टेलीफोन की घण्टी बजती है । मनोहर चला जाता है ।]

वीणा : (दृढ़ता से) नहीं, यह नहीं हो सकता । दिवाकर की हत्या नहीं हो सकती । मैं हर तरह से दिवाकर की रक्षा करूँगी चाहे मुझे इसके लिए कितना ही बलिदान क्यों न करना पड़े । (सोचती हुई चौंककर) क्या मैं इस पथ को नहीं अपना सकती ? खैर, यह पीछे की बात है । मुझे एक देश-भक्त की रक्षा करनी होगी । मनोहर की आँखों में शरारत झाँक रही है । वह प्रलोभनों से टक्कर नहीं ले सकता । इतनी नीचता, मित्र बनाकर धोखा देना, मैं नहीं जानती थी ।

[इसी समय जोर से हँसता हुआ मनोहर आता है ।]

मनोहर : (अट्टहास करता हुआ) खूब ! यह भी खूब रही ! पुलिस ने कुछ आदमियों को गिरफ्तार किया है । उनमें

दिवाकर भी है। दिवाकर भी पकड़ा गया है। (फिर हँसता है) हा, हा, पुलिस का दिमाग भी खूब है!

वीणा : (उत्सुकता से) क्या बात है, कौन पकड़ा गया है?

मनोहर : पुलिस ने कुछ आदमियों को पकड़ा है। कहते हैं उनमें दिवाकर भी है। वह बीमार है। बोलता नहीं है। पुलिस का ख्याल है वही दिवाकर है। चलो, थोड़ी देर को पीछा छूटा। अब पहचान होगी। पता लगाया जाएगा। जिन्होंने दिवाकर को देखा है वे बुलाए जाएँगे। मैं जरा जा रहा हूँ, वीणा।

वीणा : (स्त्रीजनोचित कमजोरी से) लेकिन हमको भी तो कुछ सोचना है।

मनोहर : हमें कुछ सोचना नहीं है। मेरे हाथ आसमान चढ़ने की सीढ़ी आ गई है वीणा।

वीणा : शायद वहीं से नरक का रास्ता भी शुरू होता है।

मनोहर : (वीणा को डाँटकर) तुम लोग सलाई से अपने पास की जाली बुन सकती हो, दूर की नहीं। (आगे बढ़ता है। इसी समय बंगले के पोर्टिको में एक मोटर के रुकने की आवाज आती है) कौन है?

[धड़धड़ाता हुआ 'मनोहर मनोहर' चिल्लाता हुआ ट्यूडर आता है।]

ट्यूडर : हैलो, मनोहर? तुम्हारे बंगले के पीछे कौन आदमी है? 'मूविंग इन ए वैरी सस्पिशस् वे।' अच्छा, बहुत लोग पकड़ा गया है। (वीणा को देखकर) गुडआफ्टर-नून, मिसेज़ मनोहर।

वीणा : गुड आफ्टरनून टु यू, मि० ट्यूडर।

मनोहर : वह मेरा एक बीमार मित्र है, सर! डाक्टर ने उसे टहलने को बताया है। आइए बैठिए।

ट्यूडर : नहीं, नहीं, बैठने की जरूरत नहीं। इफ वी कुड रियली अरैस्ट दैट रॉग।

मनोहर : ये लोग कहाँ पकड़े गए ?

ट्यूडर : फोर्ट के पीछे एक झाड़ी में और राजेन्द्र भी। चार आदमी हैं। यू नो दिवाकर बाई फेस आई सपोज।

मनोहर : नो, सर। [इसी समय दिवाकर आता है।]

दिवाकर : गुड मार्निंग, मि० ट्यूडर।

ट्यूडर : (मरी हुई आवाज से) गुड मार्निंग।

मनोहर : आप ही मेरे बीमार मेहमान हैं। आइए चलें। वीणा, तुम इनको दवा दिलाओ !

ट्यूडर : (दिवाकर से) आप कैसे जानटा हम ट्यूडर हूँ ?

दिवाकर : (लापरवाही से) इन्टैलीजैन्स ब्रांच के चीफ मि० ट्यूडर को कौन नहीं जानता ?

मनोहर : तुम आराम करो भाई ! आइए, साहब, चलें।

ट्यूडर : ओः, आई सी ! ओनली क्रिमिनल्स नो मी। हम उनके लिए शेर हूँ, शेर। आप कहाँ से आटा है ?

दिवाकर : पढ़े-लिखे मूर्ख में विद्वान् से अधिक चमक होती है, मि० ट्यूडर।

ट्यूडर : (कुछ भी न समझकर, मनोहर से) क्या कहता है तुम्हारा दोस्त ?

मनोहर : कुछ नहीं सर। कभी-कभी मेरा मित्र दर्शन बोलता है।

ट्यूडर : दर्शन ?

मनोहर : फिलासफी।

ट्यूडर : ओ आई सी ! इज ही ए फिलासफर ?

मनोहर : यस, सर।

ट्यूडर : वी आर गैटिंग लेट, मनोहर, कम आन। (दिवाकर से) वैल, वैरी ग्लैड टु सी यू। लेट अस सी दोज रेवेल्यू-

शनरीज फॉर फर्दर प्रोसीजर।

दिवाकर : धन्यवाद !

[मनोहर ट्यूडर को लेकर चला जाता है। दिवाकर ट्यूडर को घूरता देखता रहता है। वीणा वहुत देर तक अपने में खोई रहने के वाद]

वीणा : आपने तो हम लोगों के प्राण ही सुखा दिए।

दिवाकर : वह मुझे पहचानने की कोशिश कर रहा था। लेकिन एक नये दिवाकर ने मुझे वचा लिया।

वीणा : क्या आपको कभी उसने देखा है ?

दिवाकर : दो वार। वह झुटपुटे का समय था।

वीणा : फिर आपने ऐसा साहस क्यों किया ?

दिवाकर : मुझे साहस लेने जाना नहीं पड़ता, वीणा देवी। मैं जानता हूँ आप मुझे जान गई हैं। (वात वदलकर) मैं चाहता हूँ कि वह मुझे पहचान लेता। आपको इनाम और यश मिलता।

वीणा : क्या आप हमको···

दिवाकर : (लापरवाही से) क्या एक झोंपड़ी के लिए कोई बंगला छोड़ सकता है ? मित्रता के एक गुण से मनोहर के पुराने अडिग विश्वास टूटे नहीं हैं।

वीणा : (वनावटी क्रोध से) क्या मतलव आपका ?

दिवाकर : जो आप समझती हैं वही। अभी थोड़ी देर पहले आप दिवाकर को पकड़वाकर इनाम लेना चाहती थीं, यश और इज्जत पाने के लिए वेचैन थीं।

वीणा : मैं···नहीं जानती थी कि आप इतने···

दिवाकर : तो टेलीफोन दूर नहीं है।

वीणा : आपको मालूम है यदि आप हमारे घर में पकड़े जाएँ तो हमारी क्या हालत होगी ?

दिवाकर : मुझे मालूम है। इसलिए मैं ट्यूडर के सामने आया था कि मेरे कारण वह आप पर सन्देह न करे। उसने मुझे बंगले के पिछले भाग में घूमते देखा। वह देर तक खड़ा घूरता रहा। मैंने समझा उसे मुझ पर सन्देह हो रहा है। उसी को दूर करने मैं आ गया। वह कल्पना भी नहीं कर सकता कि दिवाकर मनोहर के यहाँ होगा। (कुरसी पर बैठ जाता है।)

वीणा : मैं आपके तप, त्याग और देशभक्ति का सम्मान करती हूँ। आप महान् हैं। मेरे जीवन में यह पहला ही अवसर है कि···

दिवाकर : (हँसकर) काश ! मैं अपना सम्मान कर पाता। यही नहीं किया मैंने, वीणा देवी।

वीणा : (तेजी में) क्या आप चाहते हैं कि पुलिस आपको पकड़ ले ?

दिवाकर : (खड़ा होकर) नहीं, हरगिज नहीं। मरते दम तक मैं अपना काम करना चाहता हूँ। (चुप्पी)

वीणा : (ठंडी होकर) क्या आप अपने दल में किसी और को भी भरती करते हैं ?

दिवाकर : (चुप रहकर सोचता हुआ) हम लोगों का दल उन लोगों का दल है जो अपना सिर हथेली पर रखकर आग पर चलते हैं। क्यों, तुम ऐसा क्यों पूछती हो ?

वीणा : कुछ नहीं, यों ही। मैं अभी आई। (बंगले में चली जाती है।)

दिवाकर : मेरे जीवन का ध्येय अधूरा है। हम लोग स्वतन्त्रता की नींव के लिए एक ईंट की तरह हैं। लेकिन मैं पूरी ईंट भी नहीं बन पाया। हम लोगों के प्रयत्न आधे से अधिक निष्फल होते हैं। न जाने क्यों ? (सोचकर) इसलिए

कि हम लोग साधनहीन हैं। अपने सिर से पहाड़ को तोड़ना चाहते हैं। उसे चूर-चूर कर देना चाहते हैं। मुझे अभी यहाँ से जाना होगा।

[वीणा लौटकर आती है।]

वीणा : (पोटली देती हुई) यह मेरी तुच्छ भेंट है।

दिवाकर : क्या है इसमें ? (टटोलकर) नोट ? यह हमारे लिए बड़े काम की चीज है। कई वार सोच चुका हूँ कि रेणु को, माँ को भी चिन्ता से मुक्त कर दूँ। लेकिन जीवन···

वीणा : रेणु आपकी पत्नी का नाम है ? लेकिन जीवन···

दिवाकर : सात-आठ साल का एक बच्चा।

वीणा : क्या उन्हें मार देना चाहते हैं ?

दिवाकर : दोनों को। लेकिन जीवन···

वीणा : न जाने आप ऐसी वातें सोच भी कैसे सकते हैं ?

दिवाकर : लड़के को तुम रख लो, वीणा, मैं उन दोनों को कष्ट से मुक्त कर देना चाहता हूँ।

वीणा : कितने कठोर हैं आप !

दिवाकर : क्रान्तिकारी पत्थर होता है, उसके दिल नहीं होता। कोई भी भावुकता, कला, सौन्दर्य, प्रेम उसके लिए नहीं है। उसके सामने मनुष्य के दो रूप हैं—अपना या शत्रु का। एक ओर माँ की स्वतन्त्रता और दूसरी ओर उसमें विघ्न डालने वाले व्यक्तियों का समूह। (तेज होकर) क्रान्तिकारी अपने उद्देश्य के लिए माता-पिता, भाई-वहन, पत्नी सभी की हत्या कर सकता है।

वीणा : (खड़ी होकर) ओफ !

दिवाकर : शत्रु को समाप्त कर देना ही उसका शास्त्र है।

वीणा : आपने मनोहर पर विश्वास कर लिया। क्या वह आप

की कमजोरी नहीं है ?

दिवाकर : विश्वास मैंने नहीं किया। किन्तु परिस्थिति ने मुझे वैसा मानने के लिए बाध्य किया है। मैं मानता हूँ, राक्षस में भी कभी-कभी दया होती है। बस, इतना ही। इसी आधार पर…मैं जानता हूँ

वीणा : यदि वह आपको पकड़वा दें तो ? क्योंकि…

दिवाकर : आपको कहने की आवश्यकता नहीं है। मैं जानता हूँ उसके हृदय में संघर्ष हो रहा है। वह अपने को छिपा-कर भी नहीं छिपा पाता। तुम्हारे हृदय में भी…

वीणा : आप ठीक कहते हैं, किन्तु क्या…

दिवाकर : साधना का मार्ग कठिन है, वीणा। हमारी पार्टी परीक्षा लेती है।

[मनोहर रिवाल्वर ताने आता है]

मनोहर : (पास आकर दिवाकर से) हैण्ड्स अप !

[वीणा और दिवाकर इस अवस्था से परिचित न होने के कारण एकदम कुछ घबरा जाते हैं। वीणा आँखें बन्द करके बैठ जाती है। दिवाकर फुरती से रिवाल्वर निकाल लेता है।]

मनोहर : (हँसकर) बस-बस, दिवाकर, मैं मज़ाक कर रहा था, दिवाकर, तुम सचमुच बड़े वीर हो।

[परदा गिरता है।]

दूसरा दृश्य

[आँगन में तुलसी के घरौंदे के सामने सूर्य की ओर मुँह किए हुए दयामयी अर्घ्य दे रही है, एकटक निगाह से प्रार्थना करती हुई सूर्य की ओर देख रही है। दयामयी सफेद धोती पहने है जिसमें थेगड़ी लगी है। गौर वर्ण, तेजस्वी मुख पर सात्विक भाव झलक रहे हैं। शरीर में यौवन की ढलान के चिह्न, कद मँझोला, इकहरा शरीर, दुर्वल; बड़ी-वड़ी आँखें, माथे पर सफेद चंदन की विन्दी। अर्घ्य देने के वाद देर तक सूर्य की ओर देखती प्रार्थना करती रहती है। इसी समय सात-आठ साल का लड़का जीवन प्रवेश करता है। खद्दर का कुर्ता और वैसा ही पाजामा, गले में वस्ता लटक रहा है। नंगे पैर आकर वृद्धा दयामयी के सामने खड़ा हो जाता है।]

दयामयी : (उत्सुकता और निराशा भरे हुए) आज इतनी जल्दी आ गए, जीवन ?

जीवन : माँ, माँ ! मास्टर साहव ने स्कूल से निकाल दिया। कहते हैं तुम्हारे बाप सरकार के खिलाफ हैं। तुम्हें स्कूल में नहीं पढ़ाएँगे।

दयामयी : (वेचैनी आश्चर्य पीकर) हूँ !

जीवन : हम सरकार के खिलाफ हैं, माँ, क्या किया वावूजी ने ? (दयामयी सूर्य की तरफ देखती रहती है) माँ, वावू कहाँ हैं, तुम कहती थीं वह गए हैं, कहाँ गए हैं, क्या लेने गए हैं ?

दयामयी : (बच्चे के पास आकर उसके सिर पर हाथ फेरती है और गम्भीर मुद्रा बनाए) बस्ता रख दो, बेटा।

जीवन : आज हमारे यहाँ इन्स्पेक्टर साहब आ रहे हैं। पर हमें निकाल दिया। और सब अच्छे हैं, हम ही खराब हैं! अब नहीं पढ़ूँगा क्या ? मैं तो पढ़ूँगा, माँ ! मैं बाबूजी जैसा बनूँगा, माँ ! तुम मुझे और किसी स्कूल में भरती करा देना—भला ?

दयामयी : (आँखों में छलकते हुए आँसुओं को रोकती हुई और भर्राई हुई आवाज में) बस्ता रख दो, बेटा।

जीवन : हमारे मास्टर साहब ने मुझे बाहर ले जाकर कहा—"तुम घर जाओ, जीवन।" और वह रोने लगे। रो क्यों रहे थे वे ? (बस्ता रखने चलता है, फिर लौटकर) हेडमास्टर साहब ने हमें निकाल दिया और चोर लड़के बैठे थे, झूठ बोलने वाले, गालियाँ देने वाले भी। सब बैठे और मुझे निकाल दिया। बड़े वैसे हैं हेडमास्टर साहब, हैं न माँ ?

दयामयी : (दूसरी तरफ मुँह करके आँसू पोंछती है। जीवन की ओर देखकर) हाँ, बड़े वैसे हैं तुम्हारे हेडमास्टर। तुम जाओ और सवेरे वाली किताब पढ़ो।

[जीवन कमरे में जाता है और फौरन लौट आता है।]

जीवन : माँ, तुम हेडमास्टर के पास जाओगी ? नहीं, तुम मत जाना। वहाँ औरतें नहीं जातीं। अम्माँ भी नहीं जाएँगी। फिर अब मैं कहाँ पढ़ूँगा ? (अपने आप) न जाने अब मैं कहाँ पढ़ूँगा ? (दौड़कर किताब ले आता है और उसकी तसवीरें देखने लगता है।)

दयामयी : (कुछ देर मौन रहकर) अब यही कसर थी वह भी हो

ली, देख रहे हो तुम ? धीरे-धीरे सव द्वार बन्द हो रहे हैं। पुलिस का चौवीस घण्टे पहरा रहता है वाहर। लोग हम से मिलते डरते हैं, वात करते डरते हैं। जव चाहें रात को, दिन में, पुलिसवाले घर में घुस पड़ते हैं और चप्पा-चप्पा जमीन छान मारते हैं।

[इसी समय एक पुलिसमैन अन्दर आता है।]

पुलिस वाला : माईजी, आज जीवन जल्दी आ गया।

जीवन : हमको हेडमास्टर ने आज स्कूल से निकाल दिया।

[दयामयी विना कुछ वोले पुलिसवाले की तरफ देखती है, जैसे उत्तर हो गया है।]

पुलिसवाला : ज़माना वड़ा खराव है, माँजी। वड़े वावू आप भी तकलीफ उठा रहे हैं और तुम्हें भी कष्ट दे रहे हैं। सीधे से आ जाएँ और सरकारी अपरूवर वन जाएँ तो छूट सकते हैं।

दयामयी : (क्रोध से) तुम से मैंने इतनी वार कहा कि भीतर मत आया करो। जाओ, तुम कौन हो उपदेश देनेवाले ?

पुलिसवाला : गलती माफ। मैं तो जीवन भैया को देखकर आ गया था। (वड़वड़ाता चला जाता है।)

जीवन : इसने वाहर भी पूछा था, माँ !

दयामयी : दरवाजा वन्द कर दो, जीवन। (थाली में दाल वीनती है, जीवन तसवीरें देखता रहता है।)

दयामयी : (कड़ककर) जाओ, सुना नहीं ?

जीवन : (दरवाजा वन्द करके माँ के पास खड़ा होकर) तो क्या अव अम्माँ भी स्कूल से निकाल दी जाएँगी ?

[दयामयी दाल वीनना वन्द करके वच्चे की तरफ देखती है जैसे उस छोटे से वच्चे ने भविष्य का दर्शन कर लिया हो। एकदम सिहर उठती

है, फिर गम्भीर होकर दाल बीनने लगती है।]

जीवन : हम ने सारे सबक याद कर लिए। तुम देखो न माँ, हमारी कापी कितनी साफ है। (दौड़कर कापी बस्ते में से निकाल लाता है।) फिर भी मास्टर साहब ने हमें निकाल दिया।

दयामयी : अम्माँ आज तुम्हारी परीक्षा लेंगी। मैं उनसे कह दूंगी।

जीवन : (निहोरे के स्वर में) हम वाहर खेल आएँ ?

दयामयी : अच्छे लड़के गलियों में नहीं खेलते, बेटा! अपनी किताब पढ़ते हैं। वही किताब पढ़ो।

जीवन : (पुस्तक पढ़ता है) लोकमान्य तिलक का जीवन विद्रोह का जीवन था। (रुककर) विद्रोही क्या ?

दयामयी : इसका मतलब है तिलक सदा सरकार के विरोधी रहे। उन्होंने हमेशा सरकार से लड़ाई की। तुमने तिलक की कहानी पहले भी पढ़ी है।

जीवन : जैसे हमारे बावूजी लड़ते हैं ?

दयामयी : हाँ।

जीवन : कैसे लड़ते हैं, तीर-कमान लेकर, तलवार लेकर ? बावूजी के पास तो मैंने एक भी तलवार नहीं देखी। उस दिन रात को आए थे न। मैं भी एक तीर-कमान वनाऊँगा।

दयामयी : (दाल बीनना वन्द करके) हाँ।

जीवन : क्यों लड़ते हैं सरकार से वाबूजी ?

दयामयी : अंग्रेजों को यहाँ से निकालने के लिए।

जीवन : (कुछ सोचकर) अंग्रेज, ये टोप वाले, ये तो मुझे भी बुरे लगते हैं। मैं भी इनको निकालूंगा।

दयामयी : यह देश हमारा है। तुम्हारे बावूजी इन्हें देश से निकालने गए हैं।

जीवन : कान पकड़कर या तलवार से ?

दयामयी : (हँसकर) हाँ, घसीटकर बाहर कर देंगे।

[दरवाजा खटखटाने की आवाज आती है। जीवन दरवाजा खोलता है। उदास रेणु का प्रवेश। २७ साल की रमणी, सुन्दर शरीर पर चिन्ता से आकुल, साधारण धोती पहने, कंधे पर झोला, शुभ्र वर्ण, मादक आँखें, कुछ लम्बा गोल मुख, कद साधारण, भीतर-ही-भीतर घुलने के कारण गम्भीर मुखाकृति, चेहरे पर परिश्रम के चिह्न। दयामयी प्रश्नसूचक दृष्टि से रेणु की ओर देखती है।]

जीवन : (आगे आकर) अम्माँ, हमको स्कूल से निकाल दिया। मास्टर साहब ने कहा—"तुम घर जाओ। तुम्हारे बाबूजी सरकार के···" क्या हैं माँ ? हाँ, खिलाफ हैं। अब हम भी सरकार के खिलाफ बनेंगे, अम्माँ ! हमको निकाल दिया, हम उनको निकाल देंगे।

रेणु : आज मेरा भी काम छूट गया।

दयामयी : (घबराहट में थाली रखकर देखती हुई) काम छूट गया ? क्या तुझे भी निकाल दिया ?

रेणु : हम जैसे ही स्कूल पहुँचे, प्रिन्सिपल ने बुलाकर कहा, "हमें खेद है कि हम आपको नहीं रख सकेंगे।"

[दयामयी गुमसुम बैठी रहती है।]

जीवन : हमने कहा था न, अम्माँ को भी वे निकाल देंगे। अब हम कहाँ पढ़ेंगे अम्माँ ?

[रेणु जीवन के सिर पर हाथ फेरती हुई दयामयी की तरफ देखती रहती है।]

रेणु : स्कूल कमेटी के सभापति रायसाहब हैं। भला वहाँ हम

काम कैसे कर सकते थे ? पहले जो डर था वही हुआ।

[लम्बी साँस लेकर रेणु कमरे में चली जाती है। दयामयी गुम-सुम धीरे-धीरे दाल बीनने लगती है। वातावरण में घुटन पैदा हो जाती है। जीवन भी चुप होकर किताब की तसवीरें देखने लगता है। मालूम होता है दयामयी की लम्बी साँसें सारे आँगन में फैल गई हैं। कुछ देर चुप्पी रहती है। रेणु कपड़े बदलकर आती है।]

रेणु : लाओ, मैं दाल बीन दूँ, तुम अपना गीता-पाठ कर लो। २५ रुपये तनख्वाह के बने सो भी दे दिए। (रुपये दयामयी के सामने रख देती है। दयामयी दाल बीनती रहती है। रुपये वैसे ही पड़े रहते हैं।) लाओ न, हम दाल बीन लें (हाथ से दाल की थाली ले लेती है।)

दयामयी : (मुट्ठी में रुपये लेती हुई) दो महीने से मकान का किराया नहीं दिया। बीस तो वही ले जाएगा। सवेरे भी आया था। बहुत बक-झक कर रहा था।

रेणु : पुलिसवाले उस पर दबाव डाल रहे हैं कि हम से मकान खाली करा ले।

दयामयी : पुलिसवाले हमें फाँसी क्यों नहीं दे देते ? एक बार ही सब काम निबट जाए।

रेणु : जैसे हमको कहीं रहने नहीं देंगे। जीने नहीं देंगे। मार ही डालेंगे दुष्ट कहीं के।

जीवन : (चिल्लाकर) अम्माँ, तो क्या तिलकजी ने स्कूल में मूँगफली नहीं खाई थी, फिर उनके मास्टर ने उन्हें क्यों मारा, बेंच पर क्यों खड़ा कर दिया ? क्या उस वक्त भी उनके मूँछें थीं जब वह पढ़ते थे ?

दयामयी : मूँछें तो बड़े होने पर आती हैं बेटा ! लड़कों ने उनका

झूठा नाम लगा दिया था।

जीवन : तुम ठीक कहती हो। हमारे स्कूल में लड़के मूंगफली खाते हैं। हम तो नहीं खाते। हमारे पास इतने पैसे भी तो नहीं हैं न !

दयामयी : स्कूल पढ़ने की जगह है, खाने की जगह नहीं है। स्कूल में, बाजार में, कभी नहीं खाना चाहिए। खाने की जगह तो घर है।

[जीवन पुस्तक में ध्यान लगाकर पढ़ने लगता है, कोई उत्तर नहीं देता।]

रेणु : तो किराया दे दो।

[दयामयी कुशा का आसन बिछाकर गीता का पाठ करती है। रेणु दाल बीनती है। दरवाजे पर खट-खट की आवाज।]

जीवन : कौन ? (दौड़कर किवाड़ खोलता है।)

मकान मालिक : (अन्दर आकर) माँजी, दो महीने हो गए। हमारे घर भी खजाना नहीं गढ़ा है। कहाँ तक माँगें ? मैं कहता हूँ कि नहीं दे सकतीं तो मकान खाली कर दो। मैं कुछ नहीं लूँगा।

रणु : बहुत क्यों बोलते हो, लो अपना किराया। रसीद लाए हो ? (दयामयी की तरफ देखती है।)

मकान मालिक : किराया देंगी तो रसीद भी लेंगी। कान खोलकर सुन लो। इस महीने से १५ रु० देना होगा नहीं तो मकान खाली करना पड़ेगा। फिर मैं कुछ न सुनूँगा।

दयामयी : तुम तो विना वात के बिगड़ रहे हो। अपना किराया लो और रसीद दे दो। रही किराया बढ़ाने की बात सो ऐसे किराया नहीं वढ़ सकता। न कोई मकान ही खाली करा सकता है।

मकान मालिक : (गरजकर) क्यों नहीं करा सकता ? मैं करा सकता हूँ। चाहूँ तो कल सारा सामान उठवाकर फिकवा दूँ। मैं कहता हूँ, औरतें हैं, न बोलूँ इनसे। सिर पर ही चढ़ी चली जाती हैं। कल ही दरोगाजी कह रहे थे।

दयामयी : (उठकर पास आती हुई) दरोगाजी के भरोसे न रहना लाला। कल को तुम्हारा और तुम्हारे घरवालों का कहीं पता भी न लगेगा। जो आदमी इतनी बड़ी सर-कार से लड़ रहा है···

रेणु : (पास जाकर) जाने दो, ऐसों के मुँह लगना ठीक नहीं है। हाँ, लाओ रसीद। लो अपना किराया।

मकान मालिक : (उसी तेजी में) यह मत समझना माँजी, सारा थाना मेरे साथ है। उन्होंने कहा है कि इन लोगों को निकाल दो।

दयामयी : तो फिर निकाल दो। देखते क्या हो ?असबाब उठाकर फेंक दो। मैं कहती हूँ कि पुलिसवाले पीछे मदद करेंगे पहले काम तमाम हो जाएगा। जरा हिम्मत करके देखो न ?

रेणु : खोजने पर निशान भी नहीं मिलेगा। सुना नहीं है क्या ? खैर, कान खोलकर सुन लो। अपना किराया महीने के महीने लेते जाओ। इसी में भला है। रसीद ले आओ पहले।

मकान मालिक : (सोचता हुआ नरम पड़कर) आप तो वैसे ही नाराज़ हो रही हैं, माँजी। मैं क्या नहीं जानता दिवाकर बाबू को। बड़े-बड़े पुलिस के अफसरों को उन्होंने नाकों चने चबवा दिए। मैं भी क्या करूँ ? बात यह है··· बात यह है ये पुलिसवाले मुझे रोज़ तंग करते हैं।

दयामयी : मैं जानती हूँ।

मकान मालिक : अच्छा, अभी रसीद लाया।

[चला जाता है। रेणु दरवाज़ा वन्द कर देती है।]

रेणु : जीने के सारे रास्ते धीरे-धीरे वन्द हो रहे हैं। लड़के को स्कूल से निकाल दिया। हमारी नौकरी छूट गई। अव क्या होगा माँ, कैसे करेंगे ?

दयामयी : घवरा मत वेटी, हमारी दृढ़ता की परीक्षा हो रही है। जव आग जलती है तव सारे वदन को सेंक लगता है। एक तरफ सारा राज, तोप, मशीनगन. गोले, पुलिस, फौज और दूसरी ओर स्वतन्त्रता की आँच में तपे हुए ये थोड़े से मांस के लोथड़े, जो अकेले वेपतवार, विना नाव के कष्टों के समुद्र में कूद पड़े हैं। मैं उन्हीं की माँ हूँ, रेणु।

रेणु : हमें कोई कष्ट नहीं है माँ !

जीवन : ये पुलिसवाले वहुत खराव हैं माँ ! तिलकजी को भी जेल भेज दिया। वस अव मैं नहीं पढ़ूँगा। (उठकर कूदने लगता है।)

दयामयी : रहने दो, फिर पढ़ लेना।

रेणु : आज तो तेल भी खत्म हो गया।

दयामयी : कभी-कभी सोचती हूँ इन थोड़े से पत्थरों से क्या नदी का पुल वन सकेगा ? पर इन लोगों ने भी तो कुछ-न-कुछ ज़रूर सोचा होगा।

रेणु : सुना है वड़े ज़ोर से धर-पकड़ हो रही है। उनके लिए तो इनाम भी है।

दयामयी : कोई कहता था दस हज़ार का इनाम है। मेरी छाती गर्व से फूल उठती है, जव मैं अपने बच्चे का खयाल करती हूँ। ग्रहण भी तो सूर्य और चाँद को ही

लगता है ।

रेणु : (हृदय में एक हूक-सी उठती है) न जाने कहाँ होंगे वे ? बहुत दिन हो गए देखे ।

दयामयी : जहाँ ऐसे लोगों को होना चाहिए बेटी, और कहाँ होंगे ? तू तो मेरी अशोक वन की सीता है । (टप-टप करके आँसू गिरते हैं ।)

रेणु : यह क्या कर रही है, माँ ?

दयामयी : (आँसू पोंछकर) कुछ नहीं, बेटे को वात्सल्य प्रेम का अर्घ्य देने के लिए हृदय उमड़ पड़ा । मैं कच्ची नहीं हूँ, रेणु । जहर पीकर आया है मेरा यह मन, जो मरना नहीं जानता, रोना नहीं जानता, मेरी बेटी । और तेरा विवाह तो जैसे परीक्षा पर परीक्षा देने को हुआ है ।

रेणु : हाँ, माँ, मुझ-सा बड़भागी कौन है जिसके स्वामी कष्टों की आग में तपकर कुन्दन हो रहे हैं । मुझे कोई कष्ट नहीं है । तुम्हारी चरण-रज सदा मुझे मिलती रहे तो मेरे हृदय के आँसू जीवन में बदल जाएँगे ।

दयामयी : तो मैं तेल ले आऊँ ?

जीवन : मैं भी चलूँगा, माँ ?

रेणु : इसे भी साथ लेती जाओ । अब तो बच्चे इसके साथ खेलते भी डरते हैं । मैं जब बाहर निकलती हूँ तो जान-पहचान की स्त्रियाँ ऐसे कतराती हैं जैसे मेरी छाया भी उन्हें डस लेगी । दूर-दूर से लोग देखते हैं । (हँसकर) कुछ तो दूर ही खड़े होकर प्रणाम भी करते हैं ।

दयामयी : तू भी तो साक्षात् दुर्गा है, बेटी । ला, तेल की बोतल दे दे । चलो बेटा जीवन ।

रेणु : (जाती हुई रुककर) अभी कल ही की तो बात है, गली के मोड़ पर कोई नया परिवार आकर बसा है । मैं

स्कूल जा रही थी तो एक पढ़ी-लिखी स्त्री अपने बच्चे को लाई और मेरे पैरों की धूल उठाकर उसने अपने बच्चे के माथे पर लगा ली। मैंने रुककर पूछा—"यह क्या करती हो, बहन ?" तो बोली कुछ भी नहीं। प्रणाम करके चली गई।

दयामयी : भगवान् भी उसी की परीक्षा लेते हैं, उसी को प्यार करते हैं जो कर्तव्य की आग में जल सकता है। (बोतल लेकर चलती है) दरवाज़ा बन्द कर ले।

रेणु : (दरवाज़ा बन्द करके तुलसी के घरोंदे के पास अपनी चोली में से चित्र निकालकर देखती हुई प्रणाम करती है, फिर चूमती है) प्राणनाथ, क्या हम लोग एक-दूसरे से अलग होने के लिए ही मिले थे ? तुम देश-प्रेम की आग में जल रहे हो, मैं प्रतीक्षा की अबुझ आग में। क्या इसका कभी अन्त होगा ? मेरे प्राण तुम्हारी याद में उबल-उबलकर छटपटाते रहते हैं और तुम इतने निठुर हो कि स्वप्न में भी आकर चले जाते हो। मैं जानती हूँ तुम मुझे प्रेम करते हो। मेरे सुख की खोज-खबर लेते रहते हो। पर मैं तो तुम्हें चाहती हूँ। (रुक-कर) आज हम लोग निराधार हैं। कोई सहारा नहीं है। कहीं कोई किनारा नहीं दीखता। घृणा, कष्ट, अभाव, दरिद्रता के विषधर नाग हमें लील जाने को मुँह बाये खड़े हैं। तुम्हारी माँ बाहर से हँसती हुई भी भीतर-ही-भीतर रोती हैं। मैं उन्हें धीरज नहीं बँधा सकती, (आँखों में आँसू भर आते हैं) क्योंकि मैं स्वयं कमज़ोर हूँ, निर्बल हूँ। (रोती है और टप-टप कर आँसू गिरने लगते हैं। थोड़ी देर चुप रहने के बाद) तुम्हारा लाड़ला जीवन आज स्कूल से निकाल दिया

गया। वह शैशवोचित अज्ञान में अपनी इच्छा को दबाए अब भी हँसता है और उसे देखकर मेरा हृदय भीतर-ही-भीतर फूट-फूटकर रोता है। माँ के अथाह, अतल हृदय-सागर में उसे देखकर तूफान आ गया है। पर वह माँ नहीं, साक्षात् शक्ति हैं। सचमुच मैं ऐसी सास पाकर धन्य हो गई और धन्य हो तुम, जिसको ऐसी माँ मिली। (रुककर) प्रियतम, क्या अब कोई उपाय नहीं है? आओ, और एक बार आकर मुझे आलिंगन-पाश में बाँध लो। (चित्र को छाती से लगाकर ध्यानस्थ हो जाती है। आँखों से अविरल अश्रुधारा बहती रहती है। तुलसी के घरौंदे को दोनों हाथों में भरकर) मेरी रक्षा करो, माँ। यह असह्य विरह-वेदना अब नहीं सही जाती। रक्षा करो, तुम तो विष्णु की पत्नी हो (टहलने लगती है) क्या करूँ? किस तरह उनको पाऊँ? (चित्र को सामने देखकर) मैं रोम-रोम से चाहती हूँ कि तुम अपने व्रत में पूर्ण हो। (मुस्कराकर) तुम देख रहे हो मेरी ओर। मैं यही तो चाहती हूँ। तुम मुझे देखते रहो और मैं तुम्हें। (चित्र को छाती से लगा लेती है।)

[इसी समय छत से धीरे-धीरे एक आदमी सीढ़ियाँ उतरता है।]

रेणु : (पदचाप सुनकर) कौन? तुम मुरली?

[वह आदमी पास आता है और रेणु के पैर छूकर उसकी धूल मस्तक में लगाता है।]

रेणु : (हँसकर) खूब वेश बनाया, भाई!

मुरली : बड़ी कठिनाई से आ पाया, भाभी। दरवाज़े से तो आ सकना असम्भव था। चौबीस घंटे एक-न-एक बैठा ही

रहता है न।

रेणु : हाँ, भैया। इनके मारे पास-पड़ोस के आदमी-औरतों ने आना छोड़ दिया है। जीवन के साथ खेलते वच्चों को भी उनके माँ-बाप वरज देते हैं। कहो।

मुरली : दादा का पता लग गया है।

रेणु : (आश्चर्य से) पता लग गया है ?

मुरली : हम लोगों ने आवश्यक सामग्री जुटाने के लिए पिछले दिनों रेलगाड़ी से जाते हुए खज़ाने को लूटा था—याद है न ?

रेणु : हाँ, दो महीने तो हुए उसे। फिर ?

मुरली : उसके वाद तीन अंग्रेज़ अफसर स्यालदा स्टेशन पर मारे गए।

रेणु : पढ़ चुकी हूँ। क्या वह भी तुम लोगों का···

मुरली : हाँ, उसके वाद उस दिन हम पुल उड़ाने की सोच रहे थे प्रोग्राम वन चुका था। दादा के नेतृत्व में वह काम होने जा रहा था कि अचानक उन्हें तेज़ बुखार हो ग्राया। फिर भी वह काम करते रहे। इसी समय हमने सुना कि वायसराय दौरे पर जा रहे हैं। उन्होंने हमें दिल्ली भेज दिया और आप बुखार में पड़े रहे।

रेणु : बुखार आ गया उन्हें और कोई पास भी नहीं था ?

मुरली : उन्होंने आवश्यकता नहीं समझी। फिर भी एक आदमी हम लोग उनकी देखरेख के लिए छोड़कर चले गए। वह आदमी जव-तव आता और उनकी व्यवस्था कर जाता। वह मन्दिर में वुखार में पड़े रहे। इधर वाय-सराय का दौरा अचानक कैंसल हो गया। फिर भी हम लोग वहीं लगे रहे। पीछे जाकर देखा दादा का कहीं पता नहीं है। हम लोगों को शक हुआ कहीं पकड़े गए

क्या। पर यह जानकर कि दादा को पकड़ने के लिए इनाम की घोषणा बराबर हो रही है, हमें सन्तोष हुआ।

रेणु : (घबराकर) फिर कहाँ हैं वह ? उनकी हालत कैसी है, मुरली भैया ? हाय, वह बीमार और मैं उनकी सेवा भी नहीं कर सकी।

मुरली : फिर भी उनका पता नहीं लग रहा था। हमने आस-पास सभी कुछ छान मारा। मन्दिर के आदमी से मालूम हुआ इधर उनका बुखार बढ़ गया था। वह बुखार में ही बेहोश रहने लगे और उसी अवस्था में वह पुलिस के डर से वहाँ से उठकर चले गए। दूसरे दिन पुलिस आई।

रेणु : (घबराकर) तो क्या वह पकड़े गए ?

मुरली : उसी हालत में एक आदमी उन्हें ले गया और उनका इलाज किया।

रेणु : क्या उसने उन्हें पहचान लिया ?

मुरली : हाँ, वह उनका क्लासफैलो, पुलिस का एक अफसर है।

रेणु : (चिल्लाकर) क्या ? अब खैर नहीं है, मुरली।

मुरली : वह अभी तक उसी के यहाँ हैं।

रेणु : पर यह तो बहुत बुरी बात है। हो सकता है वह उन्हें छोड़ दे और उनके साथियों को पकड़ने में उनकी सहायता चाहे। मैं पुलिसवालों पर किसी तरह का विश्वास नहीं करती, भैया ! न जाने क्यों उन्होंने ऐसी गलती की। क्या तुम विश्वास करते हो कि वह कोई भेद की बात कह देंगे ?

मुरली : हम लोगों को इसकी चिन्ता नहीं है। वह ऐसा कभी नहीं करेंगे। फिर भी वह बड़ी खतरनाक जगह घिर

गए हैं। उन्हें लौट आना चाहिए।

रेणु : वह कौन आदमी है ? क्योंकि कालिज में मैं उनसे एक क्लास पीछे थी, शायद जान सकूँ।

मुरली : मनोहरसिंह। गुप्तचर विभाग का इन्स्पेक्टर।

रेणु : (काँपकर) वह तो वहुत भयंकर आदमी है, मुरली।

मुरली : उसी ने हमारे दल के दो आदमियों को पहले भी पकड़ा है। हम लोग बड़े चिन्तित हैं कि उन्हें वहाँ से कैसे निकाला जाए। हो सकता है वह उन्हें नशा पिलाकर सभी कुछ उगलवा ले।

रेणु : मैं विश्वास नहीं करती। (कुछ देर चुप रहकर) फिर भी तुम ठीक कहते हो। वह वड़ा जालिम है। उसने बड़े-बड़े केस पकड़े हैं। वह इनके साथ भी दगा किए विना नहीं रह सकता।

मुरली : हम लोगों की जान संशय में पड़ी हुई है। दादा का मामला न होता तो हमें कोई चिन्ता नहीं थी। वह हमारे नेता हैं।

रेणु : तो क्या तुम समझते हो उसने दया करके उनको रखा है ?

मुरली : यह तो मनोविज्ञान की वात है। कभी-कभी बुरे मनुष्य के हृदय में भी सात्विक भाव उत्पन्न होते हैं, किन्तु विल्ली चूहे पर कब तक दया कर सकती है ?

रेणु : मेरी कुछ समझ में नहीं आता। मैं तुम लोगों के समान बुद्धिमान भी नहीं हूँ। न जाने क्या हो ?

मुरली : मैं जानता हूँ। हमारे बहुत से लोग इस समय बाहर हैं। डर तो नहीं है, फिर भी दादा का ख़याल तो है ही।

रेणु : मैं जानती हूँ वह दगा नहीं करेंगे। जिस दिन ऐसा होगा उस दिन···(क्रोध में भरकर) उस दिन वह

जिन्दा नहीं रहेंगे। हम लोग उन्हीं के लिए कष्ट सह रहे हैं।

मुरली : उत्तेजित न हो भाभी। ऐसा दिन कभी नहीं आएगा। उस दिन सत्य झूठा हो जाएगा। पहाड़ पानी बनकर बहने लगेगा।

रेणु : फिर तुम मुझसे क्या चाहते हो?

मुरली : सूचना देने आया था और चाहता हूँ··· (कान में कुछ कहता है।)

रेणु : तो क्या तुम मुझे भी इस आग में डालना चाहते हो, कोई बात नहीं। मैं जाऊँगी।

मुरली : मुझे आज्ञा दो। माँ कहाँ हैं, उनकी चरण-रज लेना चाहता था।

[रेणु सोचती रहती है जैसे खो गई हो। मुरली चारों तरफ देखता है। दरवाज़े के पास जाकर झाँकता है। दौड़कर कोई आ रहा है।]

रेणु : भीतर छिप जाओ। खाना खाकर जाना। अब तो याद नहीं आती कला की?

मुरली : आज मेरा प्रेम व्यापक बन गया है, भाभी। अब मैं देश के विरह में जलने लगा हूँ। मेरी आँखें खुल गई हैं। मेरा विचार बदल गया है। कला का प्रेम मेरे लिए एक लग्जरी है, अय्याशी है। ऐसा प्रेम हर निकम्मे आदमी को घेर लेता है। आज प्रत्येक युवती मेरे सामने तड़पती हुई मातृभूमि का प्रतीक है।

रेणु : काश, तुम्हारे विचार सच हों। इस दल में काम करने वाले किसी आदमी को शादी नहीं करनी चाहिए। भौतिक प्रेम उनके लिए विष है।

मुरली : वह विष पीकर मैं नीलकण्ठ बन गया हूँ। अच्छा, मुझे

आज्ञा दो।

रेणु : ठहरो, मैं देखती हूँ। माँ आ रही होंगी। चिन्ता की कोई बात नहीं है।

[द्वार पर खट-खट। रेणु कुंडी खोलती है। दयामयी और जीवन आते हैं।]

दयामयी : (बहू से), ले तेल की बोतल और यह साग। यह किराए की रसीद भी रख ले। बीस रुपये दे आई हूँ। दो रुपये दुकानदार के पिछले थे। बारह आने का सामान है।

जीवन : अम्माँ, देखो, हम गुब्बारा लाए हैं। इसमें डोरा बाँध दो।

दयामयी : जीवन बर्फी के लिए जिद्द कर रहा था सो दो आने का गुड़ भी ले आई हूँ।

जीवन : सब लड़के मिठाइयाँ खाते हैं माँ ?

रेणु : गुड़ भी मिठाई है, बेटा। हम लोग गरीब आदमी हैं न। लो। (जरा-सा गुड़ देती है।)

जीवन : (गुड़ लेता हुआ) हाँ। (खाने लगता है।)

दयामयी : (भीतर देखकर) यह कौन है ?

[मुरली बढ़कर दयामयी के पैर छूता है।]

रेणु : (मुस्कराकर) मुरली है। दरवाजे पर आहट पाकर छिप गया था।

दयामयी : (हँसती हुई) इसीलिए तुम लम्बे बाल रखते हो। मैं तो भुलावे में आ गई, जैसे कोई औरत बैठी हो।

जीवन : यह कौन हैं, अम्माँ ?

रेणु : तू नहीं जानता, पहचान ?

जीवन : मुरली काका हैं।

दयामयी : क्या हाल है तुम्हारे दादा का ?

[मुरली कान में वात करता है।]

दयामयी : (कुछ देर चुप रहकर) उसी से पूछ लो। यदि वह जाय तो……

मुरली : मैं इसीलिए आया हूँ।

दयामयी : ठीक है।

मुरली : मुझे आज्ञा दीजिए। कई काम हैं।

रेणु : और खाना!

मुरली : क्रान्तिकारी खाता नहीं है, पेट में डाल लेता है, जो भी मिल जाय, जहाँ भी मिल जाय। (दोनों के पैर छूता है।)

दयामयी : तुम्हारा काम सिद्ध हो। जाओ वेटा!

[मुरली चुपचाप ऊपर की सीढ़ियों से चला जाता है।]

दयामयी : कितनी देर हुई आए हुए?

रेणु : अभी आए थे, स्त्री के वेश में। मैं तो हैरान रह गई यह कौन औरत है?

दयामयी : क्या करें वेचारे! न जाने इन लोगों को कब सफलता मिलेगी। भूखे-प्यासे चिन्ता में अपने काम के लिए मारे-मारे फिरते हैं। तो तूने पूछा नहीं, अब तो बुखार नहीं है?

रेणु : क्या जाने, बड़ी मुसीबत में फँस गए हैं। मेरा जी तो रह-रहकर काँप उठता है।

दयामयी : अव तो उस भगवान का ही सहारा है। जो भाग्य में बदा होगा…मैंने तो अपने पुत्र की बलि चढ़ा दी है उस माँ को। प्रसन्न होगी तो लौट आएगा पर अभी तो सब ज्यों-का-त्यों है। धीरज भी तो नहीं बँधता।

[जीवन के सिर पर हाथ फेरती है; आँखों से

टप-टप करके आँसू बहने लगते हैं। रेणु देखती है तो उसका हृदय भी भर आता है।

रेणु : धीरज धरो, माँ। तुम्हीं तो हमारा सहारा हो।

दयामयी : कैसे धीरज धरूँ बेटी, कहाँ तक धीरज धरूँ ? इसका तो कोई अन्त भी दिखाई नहीं देता। इतनी बड़ी मेरी लाड़ली बेटी···

रेणु : तुम्हीं हिम्मत हारोगी तो हम किसके सहारे जीएँगे माँ ?

दयामयी : (आँसू पोंछती हुई) हिम्मत के पर्त जोड़ती हूँ पर टूट-टूटकर गिर जाते हैं बेटी !

रेणु : अब तो जो कुछ है हिम्मत बाँधकर सहना होगा। पत्थर का दिल कर लो और खून के आँसू रोओ तो भी···

जीवन : अम्माँ, तुम रोती क्यों हो ! मैं तो हूँ।

दयामयी : (जीवन को गोद में लेकर) हाँ बेटा, तू ही एक हमारा सहारा है।

[जोर से दरवाजा खटखटाने की आवाज होती है। दोनों चौकन्नी होकर देखती हैं कि बहुत से पुलिस के आदमी भीतर घुस आए हैं। थानेदार चारों तरफ देखता है।]

थानेदार : (दयामयी से) कौन था यहाँ, कौन आया था, कहाँ गया ? (पुलिस से) चप्पा-चप्पा जमीन छान डालो। अच्छी तरह देखो। छत पर चढ़कर आसपास के सब मकानों की तलाशी ले लो। (थोड़ी देर की दौड़धूप के बाद) देखा ? मिला कोई ? कोई निशान, कोई कपड़ा, जूता ?

सिपाही : (इधर-उधर देखकर लौटने पर) कुछ भी नहीं। कहीं भी कुछ नहीं मिला, हुजूर।

थानेदार : खबर गलत नहीं हो सकती। अच्छी तरह देखो।

[फिर बड़ी सरगर्मी से सारे मकान की छानबीन होती है।]

थानेदार : बुढ़िया माई, जल्दी बता वह आदमी कहाँ गया ?

दयामयी : कौन आदमी, किसको पूछ रहे हो ? यहाँ तो कोई भी नहीं आया। बिना मतलब मकान में आ घुसे, तुम्हें अकेली औरतों में आते शर्म नहीं आती ?

थानेदार : बक-बक मत करो, बताओ वह कहाँ गया ?

दयामयी : कहीं कुछ हो भी, बताऊँ क्या ? यहाँ कोई आदमी नहीं था भैया !

मुखबिर : था कैसे नहीं ? मैंने छत पर एक आदमी इधर आते देखा। मैं खबर देने गया और वह हवा हो गया।

थानेदार : मैं तुम दोनों को ले जाकर हवालात में बन्द कर दूंगा, समझीं !

दयामयी : तुम हमें फाँसी दे दो, पर कोई हो भी तो ?

थानेदार : (रेणु की तरफ) तू बता कहाँ गया ? वह आदमी कौन था ? नहीं तो···

रेणु : मैं नहीं जानती। (रसोई में चली जाती है।)

थानेदार : (इधर-उधर ढूंढ़कर) कहीं भी नहीं है। (मुखबिर से) तुम्हें ठीक मालूम है, कहीं गलती तो नहीं हुई ?

मुखबिर : हुजूर, इन आँखों ने कभी धोखा नहीं खाया। जरूर एक आदमी था। सारा बदन कपड़े से ढँका हुआ। मैंने उसे छत पर आते देखा और वह धीरे-धीरे उतरा। बुढ़िया माई, बता दो। सरकार तुमसे कुछ भी नहीं कहेंगे। बता दो कौन था वह, कहाँ गया ?

थानेदार : लातों के देवता बातों से नहीं मानते (हण्टर हाथ में लेकर दयामयी से) मार-मारकर खाल उधेड़ दूंगा।

बोल सीधी तरह से। बोल सीधी तरह से। (हण्टर तानता है) बोल, बोलती है कि नहीं ?

[दयामयी चुप खड़ी रहती है। रेणु बाहर आकर खड़ी हो जाती है।]

थानेदार : (रेणु से) हरामज़ादी, कहाँ गया वह तेरा···बता, कौन था ?

[जीवन माँ से लिपटकर रोने लगता है। थानेदार कभी दयामयी और कभी रेणु को गाली देता है, पर वे दोनों चुप हैं।]

दयामयी : (तैश में आकर) वाह, बड़े बहादुर हो ! अरे नौकरी की है तो क्या मनुष्यता भी ताक में रख दी है ? औरतों पर हाथ उठाते शर्म नहीं आती तुम्हें ? क्या तुम्हारे कोई माँ-बहन नहीं हैं ? (रोती हुई) बिना बात के यहाँ घर में घुस आए और जल्लादों की तरह लगे मारने। मार डालो बेटा !

थानेदार : शर्म आनी चाहिए तुम्हें जो सरकार के खिलाफ साजिश करके उसे उलट देना चाहती हो।

दयामयी : हम गरीब औरतें क्या सरकार को उलट देंगी ? तुम पुलिस वालों का अत्याचार, निरपराध, बेबस औरतों पर जुल्म ही काफी है सरकार को उलट देने के लिए।

थानेदार : (नरम पड़कर) मैं कहता हूँ यहाँ कौन आया था, बता दो। मैं तुम्हें इनाम दिलवाऊँगा।

रेणु : (चिल्लाकर) जो इनाम मिल रहा है क्या वही बहुत नहीं है, हत्यारो !

दयामयी : सरकार को बनाये रखने का ठेका तो तूने ही लिया है बेटा। पराई स्त्रियों पर हाथ उठाकर, उनकी बेइज्जती करके कुछ टुकड़ों के लिए अपने धर्म को बेचने वाले

सरकार को कब तक बनाये रख सकेंगे, यह भी कभी सोचा है तुमने ?

थानेदार : लेकिन सरकार दो-चार सिरफिरे लोगों के उखाड़े नहीं उखड़ सकती। भला, बड़ी-बड़ी तोप-बन्दूकों के गोलों के सामने तुम बदमाशों की क्या बिसात है ?

दयामयी : वे सिरफिरे लोग तुमसे ज्यादा देशभक्त हैं। वे अपनी मौत को हथेली पर रखकर घूमते हैं। चाहे छोटे ही सही, चाहे थोड़े ही सही, लेकिन उनकी देशभक्ति··· हिम्मत हो तो अपने उन भाइयों का मुकाबला करो। वहीं जाओ जो तुम्हारे लिए जान हथेली पर रखकर बेईमान डाकुओं को देश से निकाल देना चाहते हैं। हम औरतें क्या जानें ?

थानेदार : मैं कहता हूँ उपदेश मत दे। सीधे तौर पर बता वह आदमी कौन था, कहाँ गया ? नहीं तो मारकर बोटी-बोटी उधेड़ दूंगा, बुढ़िया। (हण्टर मारता है।)

रेणु : कौन आदमी, कैसा आदमी, हम नहीं जानते। यहाँ कोई नहीं आया।

मुखबिर : सरकार, ये यों नहीं मानेंगी।

रेणु : सब मिलकर हम दोनों को गोली से उड़ा दो, घर में आग लगा दो। (रोती है।)

दयामयी : (व्यंग्य से) हाँ, यही करो बेटा, तुम्हारे माँ-बहिन थोड़े ही हैं। अरे सत्यानासियो, उस भगवान् से डरो। (रोती हुई चिल्लाकर) तुम्हें आज मेरी बेकसूर बेटी को हण्टर मारते शर्म नहीं आई ? (चिल्लाकर दोनों रोती हैं।)

थानेदार : तुम नहीं जानतीं मैं जल्लाद हूँ, जल्लाद। मेरे मारे सारा जिला काँपता है।

मुखबिर : (जीवन को एक तरफ कोने में ले जाकर), अच्छा तुम

वताओ वेटे, कौन आया था ? मिठाई देंगे मिठाई। लो यह चार आने।

जीवन : (पैसे उसी के मुँह पर मारता हुआ) मुझे नहीं चाहिएँ।

थानेदार : नहीं वताओगे तो हम तुम्हारी दादी और माँ को पकड़ कर ले जाएँगे।

जीवन : मैंने किसी को नहीं देखा।

थानेदार : देखो, वता दो। मिठाई दूंगा। वताओ कौन आया था।

जीवन : मैं नहीं जानता।

थानेदार : अच्छा ठहर। (जीवन के कान खींचता है। जीवन कुछ नहीं वोलता। थानेदार एक थप्पड़ लगाकर फिर पूछता है। जीवन चुप रहता है। स्त्रियाँ चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगती हैं।)

दयामयी : मार डाला रे, मेरे छोटे वच्चे को मार डाला। मेरी बहू को मार रहे हैं ये हत्यारे।

थानेदार : ये वदमाश इस तरह नहीं मानेंगी। ले चलो पकड़कर, ले चलो।

दयामयी : वदमाश तो तुम लोग हो जो अवलाओं पर अत्याचार कर रहे हो। हम नहीं जाएँगे। क्यों जाएँ, हमने क्या अपराध किया है ? कोई वारंट है, वारंट दिखाओ ?

रेणु : हम नहीं जाएँगे।

जीवन : हम भी नहीं जाएँगे।

[शोरगुल सुनकर लोग इकट्ठे हो जाते हैं। थोड़ी देर तक चुप रहते हैं।]

एक आदमी : (आगे वढ़कर) क्या वात है, साहव ?

दूसरा आदमी : क्यों मार रहे हैं थानेदार साहव ? ये गरीब औरतें अपनी मुसीवतों में मर रही हैं वेचारी।

पहला आदमी : आपने इन्हें मारा ? औरतों पर हाथ उठाना…

दूसरा ग्रादमी : कहीं भी कानून में नहीं लिखा।

थानेदार : बको मत, इनको थाने चलना होगा।

तीसरा आदमी : वारंट है ? आखिर किस वात पर आप इनको थाने ले जा रहे हैं ? हम लोग सरकार के काम में कोई दखल नहीं देना चाहते। यदि इनका कसूर हो, वारंट हो तो आप इन्हें ले जा सकते हैं। औरतों का मामला है, साहव। हम इसलिए कहते हैं।

[सब लोग चिल्लाते हैं : "हाँ, हाँ, ठीक है !"]

थानेदार : तुम लोग निकल जाओ। सरकारी काम में दखल मत दो। (सिपाहियों से) घसीटकर ले चलो इन्हें।

[सिपाही तीनों को पकड़कर ले जाते हैं। रंग-मंच पर शोर मचता है। नेपथ्य में थानेदार दयामयी से : "चलो सीधी तरह से, नहीं तो यह हण्टर देखा है ?" शोर मचता है : "वड़े शर्म की वात है। गरीव, निरपराध स्त्रियों को ये पुलिस वाले मारे डाल रहे है।"]

दूसरा ग्रादमी : पुलिस का राज है न। जब रक्षक ही भक्षक हो जाए तो कोई क्या कर सकता है ?

[नेपथ्य में शोर वढ़ता जाता है। थानेदार घवरा जाता है और चुपचाप सिपाहियों के साथ वाहर निकल जाता है। वे तीनों रंगमंच पर आ जाती हैं और लोग देखते हैं जीवन के मुँह पर थप्पड़ के निशान उभर आए हैं। दयामयी के सिर से खून वह रहा है, रेणु के कपड़े फटे हैं। लोग क्रोध में पागल हो जाते हैं।]

पहला ग्रादमी : यह सरकार का राज है, जहाँ निरपराध स्त्रियों की वेइज्जती होती है।

दूसरा आदमी : क्या अपराध था इनका ?

तीसरा आदमी : (आगे आकर) रिपोर्ट करो, पुलिस पर केस चलाओ।

दूसरा आदमी : किससे रिपोर्ट करोगे, केस करोगे, सुनने वाला कौन हैं, फैसला देने वाला कौन है ? यह सरासर अत्याचार है, जुल्म है।

चौथा आदमी : इस छोटे से लड़के को आज स्कूल से निकाल दिया, जैसे यह भी क्रान्तिकारी हो।

दूसरा आदमी : किसी तरह गुजर-वसर करने वाली इस देवी की भी आज नौकरी छूट गई। कैसा जमाना है, कैसी सरकार है ?

[दयामयी खून पोंछती हुई निरीह दृष्टि से आसमान की ओर देखती है। रेणु मूर्च्छा से जागती है। जीवन रोकर माँ से चिपट जाता है और सुवकने लगता है।]

रेणु : (प्यार से जीवन के सिर पर हाथ फेरकर) रोते हो ? वहादुर वाप के वेटे होकर रोते हो ? (दयामयी की ओर देखकर, खून पोंछती हुई) हाय, यह भी देखना वदा था !

दयामयी : हाँ वेटी, आग से खेलने वालों का हाथ तो जलता ही है। चिन्ता मत करो। हमारे ऊपर किए गए अत्याचार स्वराज्य की नींव रख रहे हैं।

पहला आदमी : (आगे वढ़कर) चिन्ता मत करो, माँ। हम तुम्हारी सहायता करेंगे।

दूसरा आदमी : मैं कलेक्टर से रिपोर्ट करूँगा। आई० जी० से मिलूँगा।

तीसरा आदमी : मैं अखवारों में खवर छपवाऊँगा।

पहला आदमी : रेणु देवी को नौकरी दिलाने का जिम्मा मेरे ऊपर रहा, और तव तक मैं उनकी सहायता करूँगा। देखो, कोई

जाकर एक डाक्टर को तो बुला लाओ।

दूसरा ग्रादमी : डाक्टर क्या करेगा ?

पहला ग्रादमी : मैं उसका सर्टिफिकेट लेकर कलेक्टर से मिलूँगा।

[इसी समय दौड़ता हुआ एक आदमी आता है। "भागो, भागो, पुलिस की गारद आ रही है।" सव लोग खड़े होकर कहते हैं, "पुलिस !"]

एक आदमी : आने दो पुलिस को।

दूसरी आदमी : क्यों मरना चाहते हो, भागो। मालूम होता है कोई बड़ा कसूर किया है इन औरतों ने।

[दूर से घोड़ों की टापों की आवाज आती है।]

सब लोग : सचमुच पुलिस आ रही है, भागो।

[धीरे-धीरे सव खिसकने लगते हैं।]

दयामयी : (चिल्लाकर व्यंग्य से) वस हो गई सहायता ? जाओ, सव चले जाओ। आग से खेलने वाले दूसरे ही आदमी होते हैं। (अट्टहास करती है।)

रेणु : सहायता करने आये थे। हमें किसी की सहायता की जरूरत नहीं है माँ। आज मुझ में अनन्त बल आ गया है।

दयामयी : घबराना नहीं वेटी, मौत वार-बार नहीं आती। बेटा जीवन !

जीवन : मैं तुम्हारे साथ हूँ माँ !

रेणु : हाँ माँ, उनकी मूर्ति ही हमारा सवसे बड़ा संबल है।

जीवन : (घूरता हुआ) मैं सिपाहियों से नहीं डरता। मैं किसी से भी नहीं डरता।

रणु ग्रौर दयामयी : वेटा !

[सिपाही दरवाजा तोड़कर घुस आते हैं और दोनों स्त्रियों को घेर लेते हैं।]

[परदा गिरता है।]

तीसरा दृश्य

[ऊवड़-खावड़ जंगल का एक भाग। फूँस की एक कुटी के सामने कुछ चटाइयाँ विछी हैं। पूर्व की तरफ एक तख्त विछा है। देखने से मालूम होता है किसी साधु की कुटी है। परदा उठते ही दो आदमी वातें करते हुए आते हैं। पहला व्यक्ति पच्चीस और तीस के वीच में है। स्वस्थ भरा पूरा शरीर, ऊँचा कद, दाढ़ी वढ़ी हुई, रूएँ की टोपी पहने हुए, नीचे सलवार, ऊपर कोट, पेशावरी चप्पल, रंग गोरा। असली नाम है मनमोहन, लेकिन लोग उसको यासीन के नाम से पुकारते हैं। दूसरा युवक खाकी वर्दी में, निक्कर और कमीज पहने, जाड़े के दिनों के कारण ऊपर पुलओवर, स्टाकिंग्स और वूट पहने है। रंग काला, उतावली प्रकृति, आँखें लाल, वात-चीत में कठोर, कद मँझोला, नाम नीलूदा। नाम इसका वैसे और ही है।]

यासीन : (वात पर जोर देकर) तो मैं कहता हूँ यह वहुत बुरा हुआ है। दिवाकर दादा चाहे कितने ही बड़े हों, कितने ही महान् हों, मैं और मेरी पार्टी उन्हें माफ नहीं कर सकती।

नीलू दा : यह सिद्धान्तों का प्रश्न है और जो सिद्धान्त एक वार हमने वना लिए हैं, यदि कोई भी आदमी उनके विरुद्ध जाता है तो वह दण्डनीय है, यासीन।

यासीन : पिछले एक हफ्ते तक मैं यही जानने के लिए मारा-मारा फिरता रहा हूँ। पर कहीं कोई पता नहीं लगा।

[इसी समय साधु वेश में, दाढ़ी बढ़ाए हुई, लम्बे बाल, अधेड़ उम्र, साँवला रंग, तीखे नक्श का एक व्यक्ति कुटी से निकलता है। नाम है पाँडे। वैसे लोग उनको स्वामी कहकर पुकारते हैं।]

स्वामी : आ गए आप लोग।

यासीन : जी।

स्वामी : बैठिए। (तीनों चटाई पर बैठ जाते हैं) जरूरत इस बात की है कि ऐसे मामलों में जो कुछ भी निर्णय हो वह सर्वसम्मति से होना चाहिए।

यासीन : स्वामी, आपको मालूम है कि यह मामला कितना संगीन है। हो सकता है दिवाकर दादा की जरा-सी गलती से हम लोग एक-एक करके पकड़े जाएँ। जो नियम हमने बनाए हैं उन पर तो पूरी तरह अमल करना ही चाहिए। कोई मजाक है? हम लोगों की एक-एक साँस, एक-एक कदम मुसीबत में बँधे हुए हैं। और इन्हीं की वजह से, अगर मुझसे पूछते हो, हमने मुरली को खो दिया।

नीलूदा : यस, यस, ही शुड गो। हमारी पार्टी में दो ही सजाएँ हैं या तो निकाल देना···

यासीन : या फिर मौत। तीसरी कोई सजा नहीं।

नीलू दा : माफी आप नहीं दे सकते।

यासीन : उनका क्या बयान है?

स्वामी : और लोग आ जाएँ तब एक दफे ही बातचीत शुरू हो। तुम्हारे प्रान्त में काम कैसा चल रहा है?

[राजेन्द्र आता है।]

नीलूदा : लो राजेन्द्र आ गए। अब काम प्रारम्भ होना चाहिए।

स्वामी : आइए बैठिए। (थोड़ी देर बाद) आपको मालूम है, कायदे से दिवाकर दादा हमारी पार्टी के सभापति हैं।

लेकिन केस उन्हीं के खिलाफ है, इसलिए यह काम मेरे सुपुर्द हुआ है। दिवाकर यहीं हैं। उन्होंने भी अपना निर्णय आपके हाथों सौंप दिया है। निश्चय ही उनके खिलाफ दो बड़े अपराध हैं।

सब : अपराध साफ हैं।

स्वामी : एक तो यह कि मनोहर के हाथ में उन्हें अपने को नहीं आने देना चाहिए था और दूसरे वीणा को पार्टी में शामिल होने की स्वीकृति देना, क्योंकि वीणा हमारे घोर शत्रु पुलिस के अफसर की पत्नी है। और तीसरा मुरली का पकड़ा जाना।

यासीन : निश्चय ही अपराध संगीन हैं। उन्हें मनोहर के हाथों से भाग आना चाहिए था।

स्वामी : दिवाकर का कहना है कि वह भाग नहीं सकते थे। फिर भी मैं मानता हूँ कि मनोहर के हाथों में अपने को पड़ने देना ही एक अपराध है।

राजेन्द्र : जो काम उनके हाथ में सौंपा गया, हम मानते हैं वह काम उन्होंने पूरा किया।

नीलूदा : वह मनोहर के हाथ कहाँ पड़े ? क्या पुल के पास ?

स्वामी : वहाँ से दो मील दूर एक पुलिया के नीचे।

नीलूदा : वात यह है कि अपराध तो उन्होंने किया है। पार्टी के सिद्धान्त की दृष्टि से जव मनोहर ने उन्हें पहचान लिया और वह उसके यहाँ रहे तो अपराधी हो गए।

स्वामी : वह उनका पुराना क्लासफैलो था। जहाँ तक मनोहर का सवाल है वह चाहता तो उन्हें पकड़कर सरकारी पुरस्कार पा सकता था, लेकिन उसने वैसा नहीं किया। इससे साफ है कि मनोहर जहाँ दिवाकर की इज्जत करता है वहाँ उनके काम की भी।

यासीन : मेरा खयाल है अब हम अब लोग एक ही बार में पकड़े जाएँगे। हमारे दल में ऐसे आदमियों की कमी नहीं रही है।

नीलूदा : हियर यू आर, यासीन। यही बात है। मैं विश्वास ही नहीं कर सकता कि अब हमारा कोई मुक्ति का मार्ग है। ये पुलिस वाले किसी के सगे नहीं होते। हम लोगों का खात्मा करने के लिए रस्सी ढीली की गई है।

यासीन : मुश्किल तो यह है कि हम अपना शस्त्रागार और बम फैक्टरी भी जल्दी ही यहाँ से नहीं उठा सकते। यदि दिवाकर ने विश्वास करके वीणा को वे स्थान बता दिए हों ?

राजेन्द्र : बड़ी कठिन समस्या है। दिवाकर दा कहते हैं जो कुछ हुआ है उसके लिए वह उत्तरदायी हैं। क्या हम लोग विश्वास कर लें ?

नीलूदा : यहाँ प्रश्न दिवाकर दादा का नहीं है। एक व्यक्ति का है। व्यक्ति के गुण-दोषों के अनुसार ही हमें दण्ड देना होगा।

यासीन : मैं नीलूदा से सहमत हूँ। उनके ऊपर विश्वास करने का अर्थ है हमारी सब की मौत।

स्वामी : मैं समझता हूँ दिवाकर दादा के मनोहर के यहाँ रहने की अपेक्षा वीणा को पार्टी में बिना आज्ञा शामिल करना भयंकर विद्रोह है। उस पर किसी तरह विश्वास नहीं किया जा सकता।

नीलूदा : आप ठीक कहते हैं।

स्वामी : क्या वीणा की परीक्षा लेने तक मामले को स्थगित नहीं किया जा सकता ?

यासीन : तब तक हम लोगों की समाप्ति हो गई तो ?

नीलूदा : मेरा मत है अनुशासन की दृष्टि से उन्हें मृत्यु-दण्ड दिया जाना चाहिए।

राजेन्द्र : क्या आप दिवाकर दा के अभाव की पूर्ति कर सकते हैं ?

स्वामी : मुझे ऐसा मालूम होता है कि अनुशासन समिति दिवाकर को दण्ड देने के पक्ष में तो है···

कुछ : हाँ।

राजेन्द्र : लेकिन···

यासीन : लेकिन-लेकिन कुछ नहीं।

स्वामी : मैं ठण्डे दिल से आपसे एक बार पुनर्विचार के लिए प्रार्थना करता हूँ। कहीं ऐसा न हो कि हमको पछताना पड़े।

यासीन : ठण्डा दिल बूढ़ों का होता है।

नीलूदा : हमको एक जगह इतने आदमियों को एकत्रित नहीं होना चाहिए। मुझे डर है कहीं पुलिस का आक्रमण न हो जाए।

यासीन : मैं यह मानकर चलता हूँ कि दिवाकर दा अपराधी हैं।

नीलूदा : यह कोई नई वात नहीं है।

यासीन : फैसला हो गया। काश, मनुष्य गलतियाँ न करता !

राजेन्द्र : (वात-वात पर जोर देकर) फिर भी जितनी जल्दी आप फैसला करना चाहते हैं मैं चाहता हूँ इतनी जल्दी न की जाए। (सव लोग वोलने लगते हैं) वात यह है दिवाकर दा हमारी पार्टी के मामूली सदस्य नहीं हैं। वह हमारे मार्ग-दर्शक और कमांडर रहे हैं। उन्होंने जितने काम किए हैं, अव तक जितनी सफलता हमें मिली है, उसमें उनका वहुत बड़ा हाथ रहा है। दुर्भाग्य की वात है कि न चाहते हुए भी वह ऐसी परिस्थिति में

पड़ गए कि उससे उनका छुटकारा असम्भव था।

नीलूदा : क्या आप लेक्चर दे रहे हैं ?

यासीन : हम लोगों को वहुत घुमा-फिराकर वातें नहीं करनी चाहिए। सीधी दो-टूक बात कीजिए।

राजेन्द्र : जल्दी न करो। मामला काफी संगीन है।

नीलूदा : (अट्टहास करके) सारा आसमान पिद्दी के पैरों पर नहीं खड़ा है। नरेन गोस्वामी की कहानी पुरानी नहीं है।

राजेन्द्र : (क्रोध से) दिवाकर दा पिद्दी नहीं हैं। हम लोग उनके सामने पिद्दी हैं, बच्चे हैं। क्रान्तिकारी दल का उनका पुराना अनुभव है। उन्होंने जो-जो काम किए हैं उन्हें करने के लिए हमें मुँह धो लेना चाहिए।

यासीन : यह पार्टी की तौहीन है।

स्वामी : राजेन्द्र को बोलने दीजिए।

राजेन्द्र : फिर भी सवसे वड़ी वात यह है कि दिवाकर दा ने वहाँ रहते हुए न तो पार्टी का भेद दिया न सरेण्डर ही किया।

यासनी : यह आप कैसे कह सकते हैं ?

राजेन्द्र : इसलिए कि हम अभी तक सुरक्षित हैं, अन्यथा आप यहाँ दिखाई न देते। यह उनका ही चरित्र है कि वीणा जैसी सुख में पली स्त्री भी उनके प्रभाव से हमारे दल में सम्मिलित हुई।

स्वामी : यह अभी साध्य है, सिद्ध नहीं। हाँ, आगे कहिए।

राजेन्द्र : मैंने मुरली की तलाश में दिवाकर दा के घर का पता लगाया था। उनकी माँ और स्त्री का बुरा हाल है। रेणु को नौकरी से निकाल दिया गया। अब तक जो गुजारे का सहारा था वह भी गया। उनके लड़के जीवन को भी स्कूल से हटा दिया गया। पुलिस को मुरली के पहुँचने की खबर लग गई। उसने मुरली का पता जानने

के लिए उन्हें पीटा। थाने में दो दिनों तक भूखा-प्यासा वन्द रखा। यहाँ तक कि दिवाकर दा की माँ तभी से वेहोश हैं। शायद वे आखिरी साँस ले रही हैं। रेणु बड़ी दयनीय स्थिति में है। दिवाकर दा का अकेले का ही त्याग नहीं है।

यासीन : उनके परिवार की वात सुनकर हमें दुख है। पर सवाल यह है, क्या हम कोई मदद भी कर सकते हैं ?

स्वामी : हम लोगों का उद्देश्य जितना पवित्र है मार्ग उतना ही विकट; साध्य उतना ही कठिन। स्वतन्त्रता के लिए स्नेह की भावनाओं को हमें तिलांजलि देनी पड़ती है। घरबार, स्त्री, पुत्र, माता, भाई, वहन सब हमारे लिए गौण हैं। मैं पूछता हूँ एक ओर तुम्हारी मरणासन्न माँ है, दूसरी ओर पार्टी का काम, तुम कौन-सा काम पहले करोगे ?

नीलूदा : निश्चय ही पार्टी का।

यासीन : फिर दिवाकर दा के घर का जिक्र छोड़ो। मेरी माँ पाँच मास तक वीमारी में केवल मुझे एक वार देखने के लिए छटपटाती रहीं। मैं भी चाहता था। पर क्या मैं जा सकता था ? मेरी ड्यूटी लगी थी। मुझे वाहर जाना पड़ा और इसी वीच उनका देहान्त हो गया।

नीलूदा : दूर जाने की क्या जरूरत है ? इन्हीं स्वामी की पत्नी तपेदिक में तीन साल वीमार रही और मर गई। क्या यह जा सके ? जाने-जाने की सोचते हुए भी जव यह पहुँचे तव उस वेचारी की अर्थी निकल रही थी। यह देखकर पांडेजी उस अर्थी को नमस्कार कर लौट आए। न घर में घुसे, न श्मशान तक ही गए।

स्वामी : शारीरिक प्रेम को हमारी पार्टी के स्थान नहीं है। मैं

आपकी बातों से इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि दिवाकर दा को एक ही दण्ड दिया जाय कि वह ट्यूडर की हत्या कर दें। और यदि उसमें उनकी मृत्यु भी हो जाय तो वह उनका प्रायश्चित्त होगा (सब लोग बोलने लगते हैं। कुछ देर बाद सदस्यों के शान्त हो जाने पर) मैं वीणा की परीक्षा लूँगा। वह उसकी कठिनतम परीक्षा होगी। यही मेरा तात्कालिक निर्णय है। अन्तिम निर्णय के लिए मैं यासीन के ऊपर दायित्व सौंपूँगा।

[उस समय वातावरण में एक प्रकार की चुप्पी, भयंकरता छा जाती है। परिणाम की गंभीरता को याद करके सब चुप हो जाते हैं।]

यासीन : मैं आपका उद्देश्य जान सकता हूँ ?

स्वामी : नहीं। तुम थोड़ी देर बाद मुझसे मिलोगे। आप लोग जाइए।

[सब लोग धीरे-धीरे इधर-उधर हो जाते हैं। स्वामी ताली बजाते हैं। एक नवयुवक सम्मुख आकर खड़ा हो जाता है।]

स्वामी : वीणा को बुलाओ।

[युवक चला जाता है। स्वामी एक कागज पर कुछ लिखते हैं, उसी समय वीणा प्रवेश करता है।] तुम्हारा नाम वीणा है ?

वीणा : जी !

स्वामी : पुलिस इंस्पेक्टर मनोहरसिंह की पत्नी ?

वीणा : वह मेरा पति नहीं। मैंने उसके साथ संबन्ध त्याग दिया है।

स्वामी : धर्मशास्त्र में तो पति-पत्नी का सम्बन्ध अमर है।

वीणा : वह मनुष्य कहीं है। वासनालोलुप और देशद्रोही है।

स्वामी : तुम्हारे ये वाक्य तुम्हें दल में सम्मिलित करने के लिए काफी चिकने-चुपड़े दिखाई देते हैं।

वीणा : आप क्या कहना चाहते हैं ?

स्वामी : तुम दल में शामिल होना चाहती हो ?

वीणा : यदि हो सकूँ।

स्वामी : उस दल में, तुम्हारा पति जिसका घोर शत्रु है। और मौका पाते ही हम में से एक-एक को फाँसी पर लटका देना चाहेगा।

वीणा : मैं इस काम में उसके साथ नहीं हूँ। मैं उसको अपना पति स्वीकार नहीं करती।

स्वामी : यह हम कैसे विश्वास कर लें कि तुम्हारा वचन सत्य है ?

वीणा : इससे अधिक विश्वास उत्पन्न करने का क्या उपाय है, मैं नहीं जानती।

स्वामी : खैर, क्या तुम्हारा अव कभी भी उसके साथ कोई संबन्ध नहीं रहेगा ?

वीणा : मैं इसका उत्तर क्या दे सकती हूँ ?

स्वामी : (थोड़ी देर चुप्पी) तुमने हमारे दल का उद्देश्य जान लिया है ?

वीणा : जी !

स्वामी : उससे पूर्णतया सहमत हो ?

वीणा : जी !

स्वामी : यह आग पर चलने का मार्ग हैं। स्नेह, प्रेम नाम की कोई चीज यहाँ नहीं है। संयम, ब्रह्मचर्य, कर्तव्य और देशप्रेम, शत्रुओं से मातृभूमि का उद्धार।

वीणा : मैं स्वीकार करती हूँ।

स्वामी : तो तुम्हारा निश्चय दृढ़ है ?

वीणा : मैं क्षत्रिय की कन्या हूँ।

स्वामी : तुम्हारे पिता क्या काम करते थे ?

वीणा : उनके पिता गदर के मुखिया थे। १८५७ में सिपाही विद्रोह के मुखिया थे और उनके पुत्र, मेरे पिता सब जागीर छिन जाने पर जीवन भर हिंसा की आग में जलते रहे।

स्वामी : (चौंककर) क्या ?

वीणा : जब वह शत्रुओं को नहीं मार पाते थे तो शिकार करते थे।

स्वामी : ठीक है। दल में शामिल होने से पहले तुम्हें परीक्षा देनी होगी।

वीणा : मैं तैयार हूँ। कहिए शरीर के किस अंग को काट डालूँ।

स्वामी : ट्यूडर की हत्या।

वीणा : कर सकूँगी।

स्वामी : मनोहरसिंह की हत्या ? (इतना कहकर स्वामी बड़ी तीव्र दृष्टि से वीणा को देखता है। वीणा अप्रत्याशित रूप से एकदम सिहर उठती है, जैसे कोई वज्र गिर गया हो। थोड़ी देर बाद स्वस्थ होकर स्वामी की तरफ देखती है) पहले मनोहर की, बाद में ट्यूडर की। ये दोनों हमारे घोर शत्रु हैं। बोलो।

[वीणा चुप रहती है।]

स्वामी : साहस बटोर कर देखो, वैसे तुम्हारी कोठी भी दूर नहीं है।

वीणा : (सिर उठाकर) मैं ट्यूडर को मार सकूँगी।

स्वामी : तो वापस लौट जाओ। इसी समय चली जाओ। (ताली बजाने लगता है।)

वीणा : मुझे सोचने दीजिए।

स्वामी : हमारे दल में सोचने का अधिकार केवल नेता को मिला है। पहले मनोहर को। अभी उत्त र चाहिए, इसी क्षण।

वीणा : मैं भी मनुष्य हूँ और उसमें भी स्त्री।

स्वामी : (स्नेह मुद्रा में) जानता हूँ। पर हमको अपने दल के लिए लोहे के आदमी चाहिए। मनोहर हमारा शत्रु है, देश का शत्रु और तुम्हारा भी शत्रु। शंत्रु के साथ शत्रु की तरह व्यवहार करना चाहिए न। यह महाभारत का युद्ध है, वीणा देवी। कर्तव्य के लिए हमें युद्ध करना है, चाहे कोई भी हो।

[वीणा चुप रहती है।]

स्वामी : दल में हमारा केवल एक ही सम्वन्ध है—साथी का, काम करने वाले का। यहाँ न कोई मित्र है, न माँ, न वहन, न पति, न पत्नी।

वीणा : (वहुत देर चुप रहने के वाद) मैं···मैं (दृढ़ होकर) मैं ···मनोहर की हत्या करूँगी। मुझे स्वीकार है।

स्वामी : तुम वीर क्षत्राणी हो।

वीणा : मुझे दल में ले लिया जाएगा ?

स्वामी : मनोहर को मारने के बाद तुम्हें एक काम और करना होगा।

वीणा : करूँगी।

स्वामी : पार्टी ने दिवाकर को प्राणदण्ड दिया है।

वीणा : (जैसे उसके पैरों के नीचे से जमीन सरक गई हो) प्राण दण्ड क्यों ?

स्वामी : कारण जानने की आवश्यकता नहीं है। (वीणा की ओर देखता है। वह सिर पकड़कर बैठ जाती है) अर्जुन ने भीष्म की हत्या की थी न और अपने गुरु द्रोणाचार्य को भी मारा था। तुम्हें भी उसकी लाश को ठिकाने

लगाने में सहायता करनी होगी। उसको गोली से मार देने के वाद तुम्हें वुलाया जाएगा। सोच लो, मैं आता हूँ।

[निकल जाता है। वीणा पत्थर की तरह जड़ वनी वैठी रहती है—फटी-फटी आँखें, उतरा हुआ चेहरा, निसंज्ञ, मूक।]

वीणा : दिवाकर को प्राणदंड ? क्या किया है उन्होंने ? वहुत वड़ा दंड है। मुझ में इतना साहस नहीं, इतना वल नहीं है। मैं मनुष्य हूं। वह ठीक कहते थे, दिवाकर दादा ठीक कहते थे, हमारे दल का काम मौत को खूंदकर अभिलाषाओं को कुचलकर, आशाओं को पीसकर, विजलियों से आलिंगन करना है। जहाँ मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। चाहे शत्रु की हो या उसके अभाव में अपनी, पर उन्हें प्राणदंड, नहीं, यह सब भूठ है। यह मेरी परीक्षा ली जा रही है। इन लोगों की परीक्षा भी तो वड़ी कठोर होती है। तभी तो तिल-तिल करके प्राण हरने वाले पुलिस के अत्याचारों से भी ये पीछे नहीं हटते। कन्हाई लाल, खुदीराम, यतीन्द्र मुकर्जी, करतार सिंह जैसे वीर पुरुष इस दल ने तैयार किए हैं। यहाँ आदमी नहीं हैं, आज्ञा पर खेल-ही-खेल में प्राण झोंकने वाले देवोत्तर मनुष्य हैं। (कुछ सोचकर) देखा नहीं स्टील की तरह जमी हुई निर्णायक की कठोर आँखों में रस का कहीं नाम भी नहीं है। [जैसे यह आदमी नहीं आदमी का भूत है। यम की काली छाया है। और दिवाकर ? वह ही क्या कम हैं जो संसार में किसी से नहीं डरते। ठीक है, यहां एक ही सम्बन्ध है—साथी का। क्या मैं कर सकूँगी ? मनोहर की हत्या, तथा-

कथित पति की हत्या। जिसके आलिंगन पाश में, जिस की गरम-गरम साँसों के प्याले में मैंने जीवन का मधु पिया है, उसकी हत्या ? पहले उसी को मारना होगा ?] मैंने उसकी स्वीकृति उस लोहे के आदमी को दे दी है। जिस की भीतर घुसी आँखें पिस्तौल की गोली की तरह चमकती हैं। जिसके लकड़ी-से हाथ पिस्तौल से कड़े हैं, यह भी तो आदमी है। क्या इस दल में सभी ऐसे हैं। एक दिवाकर को देखा और दूसरे इस व्यक्ति को ? न इनमें मोह है न माया। किन्तु यह सव देश के लिए है, मातृभूमि की मुक्ति के लिए है। महाभारत···महाभारत के युद्ध में भी भाई-भतीजे का सम्वन्ध नहीं रहा था। उन्होंने ठीक ही कहा हैं। मैं भी करूँगी। मेरे भीतर भी महाभारत के लोगों का रक्त वह रहा है। मुझे स्वीकार है। (सहसा स्वामी का जलती मोमवत्ती लिए प्रवेश) मुझे स्वीकार है।

स्वामी : कल्पना नहीं।

वीणा : मैं दो वात कहना नहीं जानती।

स्वामी : पार्टी को ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है। इस मोमवत्ती की लौ पर हाथ रख दो।

वीणा : लाइए। आपको कभी मुझसे शिकायत नहीं होगी।

[निश्चल भाव से वीणा मोमवत्ती की लौ पर अपना हाथ रखे रहती है।]

स्वामी : वस करो। (ताली वजाने पर वही युवकआता है) इन्हें उसी स्थान पर ले जाओ।

[वीणा जाती है। सहसा दिवाकर का प्रवेश।]

स्वामी : मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था।

दिवाकर : मैं प्रसन्न हूँ, पार्टी अपने निर्णय में दृढ़ रही।

स्वामी : तो क्या तुम जान गए ?

दिवाकर : मैं तैयार हूँ । मुझे डर था कहीं तुम लोग कर्तव्य से न हट जाओ ।

स्वामी : (दिवाकर के पैरों में गिरकर) दादा !

दिवाकर : (स्वामी को गले लगाकर) दुखी मत हो स्वामी, हम लोग कर्तव्य-पालन के लिए यहाँ इकट्ठे हुए हैं । मैं स्वीकार करता हूँ । मेरे दोनों अपराध संगीन हैं। मनोहर के यहाँ रहना यदि मेरी विवशता है तो वीणा मेरी कमजोरी । मैं कमजोर हूँ न ? कमजोर के लिए पार्टी में कोई स्थान नहीं है । मैं स्वयं चाहता था अपने इस पाप का परिमार्जन करना ।

स्वामी : हम लोग विश्वास नहीं कर पा रहे हैं ।

दिवाकर : वीणा को मैंने ही पार्टी में शामिल होने की प्रेरणा दी है । मैं ही उसे लाया हूँ । मैं नहीं जानता मैंने क्या किया ?

स्वामी : मैं स्त्रियों को पार्टी में शामिल करना कमजोरी मानता हूँ ।

दिवाकर : पर वह आ गई । वह अपने शराबी पति से घृणा करती है । वह न केवल पुलिस का अफसर है, व्यभिचारी भी है ।

स्वामी : आप लोग उसके शिकंजे से छूटे कैसे ?

दिवाकर : वीणा ने मुझे बताया कि आज रात को ही मनोहर मेरी हत्या कर देगा । मैं सकपकाया । भागने का रास्ता नहीं था । मैं पकड़ा जाता ।

स्वामी : फिर ?

दिवाकर : वीणा ने ही मुझे निश्चित किया । वह रात होते ही उसे कोठी में ले गई और खाने के साथ ही बहुत तेज शराब पिला दी । वह खाना खाकर लेट गया । वीणा ने एक

और तेज डोज मनोहर को पिलाया। फिर उसके पूरी तरह वेसुध हो जाने पर हम लोग भाग आए।

स्वामी : वीणा के परीक्षा में उत्तीर्ण होने की सम्भावना है। वह मनोहर की हत्या करेगी, उसके वाद भी उसको एक काम सौंपा गया है।

दिवाकर : वीणा मेरी कमजोरी भी है—मेरी दृढ़ता को पीछे खींचनेवाली सौन्दर्य और स्नेह की रस्सी। मैं उसे अपनी कमजोर अवस्था में ही पार्टी में लाया। मैं अपने पर काबू न रख सका। यदि वह···

स्वामी : मेरा विश्वास है वीणा एक दिन हमारे गर्व का कारण वनेगी।

दिवाकर : (खड़ा होकर) अच्छा।

स्वामी : (रोकर) मैं क्षमा चाहता हूं, दादा। हमारा दल तुम्हारे विना कैसे काम कर सकेगा? हम कहीं के नहीं रहेंगे। हमारी पार्टी का निर्णय गलत है।

दिवाकर : गलत होने पर भी वह सही है। यदि हम पार्टी को दृढ़ता से सुरक्षित रख सके, अपने उद्देश्य के प्रति जागरूक रख सके तभी हम इतना वड़ा संग्राम कर सकते हैं। मैं तुम्हारे निर्णय को स्वीकार करता हूँ।

स्वामी : हम लोग कमजोर हैं, निर्वल हैं, निःसहाय हो जाएंगे।

दिवाकर : कर्तव्य हमारा सवसे वड़ा संवल होना चाहिए, स्वामी। मातृभूमि की मुक्ति हमारा ध्येय है। उस ध्येय का पालन करने के लिए सुव्यवस्थित रखने के लिए हमारे नियम हैं। तुम चिन्ता मत करो, स्वामी।

स्वामी : अपनी कमजोरी को मानना, अपने अपराध को स्वीकार करना सवसे वड़ा प्रायश्चित्त है। यदि आप कहें तो···

दिवाकर : मैं पार्टी का निर्णय मानूँगा। यह तुम्हारी भी एक परीक्षा

थी। अव निर्णय नहीं वदल सकता। तुम कमजोर मत वनो।

स्वामी : आप धन्य हैं। आपका जीवन धन्य है।

दिवाकर : किन्तु मैं चाहता था कि एक वार···

स्वामी : आप क्या चाहते हैं ?

दिवाकर : मेरा परिद्वार···यह मेरी दूसरी कमजोरी है, स्वामी।

स्वामी : आप लिखकर दे दीजिए, मैं यत्न करूँगा।

दिवाकर : वस इतना ही ? मैं प्रतीक्षा करूंगा। (दिवाकर एक कागज पर लिखकर स्वामी को देता हुआ चलने लगता है।)

स्वामी : (कागज हाथ में लेकर दिवाकर की ग्रोर देखता हुआ) ठीक है। पर सुनिए दादा।

दिवाकर : (लौटकर) कहो।

स्वामी : मैं एक वात पूछना चाहता हूँ। आपको हमारे निर्णय पर असन्तोष तो नहीं है ? क्या आप भी यही निर्णय देते ?

दिवाकर : (गम्भीर होकर) यह सव व्यर्थ है। (जाने लगता है।)

स्वामी : (चिल्लाकर निहोरे के स्वर में) मैं आजीवन पश्चात्ताप की आग में जलता रहूँगा, दादा। मेरा उद्धार करते जाइए।

दिवाकर : पार्टी के सामने व्यक्ति कुछ भी नहीं है। (जाता है।)

स्वामी : मैं आपसे आशीर्वाद पाना चाहता हूँ।

दिवाकर : (दूर से वोलता हुआ) सत्य वही है जिसको सव स्वीकार करते हैं; यही मैंने जाना है। तुम सुखी रहो। देश धर्म का पालन करो स्वामी।

[देर तक प्रतिध्वनि आती है। स्वामी भौंचक्का सा खड़ा रहता है।]

[परदा गिरता है।]

चौथा दृश्य

[तीसरे दृश्य का वैसा ही एक घना जंगल। नीलूदा वेचैनी से टहल रहा है। उसी वेश में।]

नीलूदा : (अपने आप) न जाने क्या हुआ, यासीन को अव तक आ जाना चाहिए। राजेन्द्र भी नहीं आए, स्वामी भी नहीं। किसी का भी कुछ पता नहीं है। क्या हुए सव लोग? कहीं वे पकड़े तो नहीं गए? सुना है जमकर गोलियाँ चलीं। कौन मरा यह भी नहीं मालूम हुआ। (रुककर) माँ, तुम स्वतन्त्र हो, तुम गौरवमयी हो, यही मेरी कामना है। मुझ में मरने की शक्ति दो। तुम्हीं ईश्वर हो, तुम्हीं देवता, तुम्हीं शक्ति।

[स्वामी आता है।]

स्वामी : नीलूदा, तुम कव से हो?

नीलूदा : (चौंककर) स्वामी, कुछ पता लगा?

स्वामी : नहीं। मैं पिछले दिनों केवल दस वम वना पाया। वे ही सव दे दिए।

नीलूदा : घातक?

स्वामी : वस अव परिणाम की प्रतीक्षा है।

नीलूदा : सुनता हूँ डटकर गोलियां चलीं।

स्वामी : दूर-दूर तक विस्फोट की आवाज हुई है। मुझे तो प्रत्येक धड़ाके के साथ एक प्रकार की प्रसन्नता का अनुभव हुआ। जैसे स्वतन्त्रता देवी को सिंहासन पर विठाने के समय उत्सव मनाया जा रहा हो।

नीलूदा : कपड़े वदल डालते। बारूद की बू आ रही है।

स्वामी : (प्रकृतिस्थ होकर) याद ही नहीं रहा। रात-भर सामान तैयार करता रहा। नीलूदा, हमको यहाँ से भी जगह बदलनी होगी। जरा देख आऊँ।

नीलूदा : नहीं-नहीं, उधर नहीं। जो बचकर आ जाए वही गनीमत है।

स्वामी : हम लोगों ने वीणा को परीक्षा की अग्नि में डाल दिया है।

[हाँफता हुआ राजेन्द्र आता है। स्वामी और नीलूदा साँस साध कर उसकी ओर देखने लगते हैं। जैसे उनकी दृष्टि ही एक प्रश्न है।]

राजेन्द्र : धर-पकड़ बड़ी तेजी से हो रही है, जैसे सारी पृथ्वी पर अविश्वास छा गया हो।

स्वामी : वीणा का क्या हुआ ?

राजेन्द्र : मैं कुछ नहीं कह सकता। रात को एक बजे तक कहीं कुछ सुनाई नहीं दिया। वीणा को भी मैं देख नहीं पाया कि इसी समय किसी की हत्या से सारा वातावरण क्षुब्ध हो उठा। सन्देह में पचासों आदमी पकड़े गए हैं।

स्वामी : (उछलकर) तो ट्यूडर मारा गया ?

राजेन्द्र : ठीक तो नहीं कह सकता, मगर इतना निश्चित है कि जो आदमी मारा गया है वह ट्यूडर ही होगा। सारे शहर में पुलिस का जाल बिछ गया है। इसीलिए हम पूरी तरह से छानबीन नहीं कर सके। यहाँ से तो वीणा तैयार थी ?

नीलूदा : बँगले पर पहुँचते ही शायद उसका विचार बदल गया।

स्वामी : इसीलिए स्थान बदलने की आवश्यकता हुई। मान लो वीणा ने मनोहर की हत्या कर दी···

राजेन्द्र : रामदास को मैं वहाँ छोड़ आया हूँ। मनोहर के बँगले

के पास जो चमारों के झोंपड़े हैं उन्हीं में वह डटा हुआ है। जूते पर पालिश और उन्हें गाँठना सीख गया है।

स्वामी : यासीन अभी नहीं आए जवकि उन्हें हमारे यहाँआने से पहले आ जाना चाहिए था।

नीलूदा : हमारी क्रान्ति उस समय तक सफल नहीं हो सकती जव तक हम जनता का विश्वास न प्राप्त करें। खुदीराम को आखिर जनता ने ही पकड़वाया था।

स्वामी : उस भूल के लिए जनता को पछताना भी पड़ा।

राजेन्द्र : फिर भी हमारी भूल तो थी ही और अव भी है। हमारी वहुत-सी असफलता का कारण यह है कि जनता हमारे उद्देश्य से जानकारी नहीं रखती। मुझे तो लगता है जैसे दिवाकर दा के कारण हमारा एक आदमी पकड़ा गया वैसे ही हम लोग एक-न-एक दिन जरूर पकड़े जाएंगे। वीणा को पार्टी में लाना वहुत वड़ी गलती हुई।

स्वामी : मुझे तुम्हारी वात ठीक लगती है, नीलूदा। हमें स्थान और कार्यक्रम वदलना होगा।

नीलूदा : मुझे लगता है दिवाकर ट्यूडर को मारते-मारते कहीं हमें ही न मरवा दें। यासीन का न आना भी मुझे शक में डाल रहा है। शायद इसीलिए दिवाकर ने पार्टी के हाथों मरने की वजाय ट्यूडर को मारकर स्वयं मरने की इच्छा प्रकट की हो। यह भी एक वहाना ही है।

राजेन्द्र · तुम वहुत आगे वढ़े जा रहे हो, नीलू। मैं कभी नहीं मान सकता कि दिवाकर दा जैसा तपा हुआ क्रान्तिकारी कभी धोखा दे सकता है।

स्वामी : लेकिन यासीन को तो वहुत पहले आ जाना चाहिए था।

नीलूदा : यासीन नहीं लौटेंगे। अकेले दिवाकर के कारण हमारे हाथ से दो आदमी छिन गए।

स्वामी : मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ। राजेन्द्र तुम भी पूरी खबर न ला सके। वायसराय की यात्रा का क्या हुआ ?

राजेन्द्र : स्थगित हो गई। लेकिन हमारी तरफ से पूरी तैयारी हैं।

स्वामी : अगर यह काम हो जाए तो क्या कहने हैं। सारा देश जैसे गूंगा हो गया है, निष्क्रिय। कभी-कभी सोचता हूँ एक तरफ तेंतीस करोड़ हैं और दूसरी तरफ दो लाख। कोई संख्या भी तो हो !

नीलूदा : यदि उधर दो लाख हैं तो इधर तो दो हजार भी नहीं हैं। हमारे ही भाई शत्रु हैं। जैसे सब को साँप सूँघ गया है।

राजेन्द्र : गुलामी भी एक नशा है, अफीम की तरह।

स्वामी : यासीन क्यों नहीं आ रहा ?

[वातावरण में घुटन फैल जाती है। सबके चेहरे उदास हो जाते हैं। प्रतीक्षा और सन्देह जैसे ये दो ही क्रान्तिकारियों के दुर्भाग्यचिह्न हैं।]

नीलूदा : दिवाकर दा को मौका देकर पार्टी ने बहुत बड़ी गलती की।

राजेन्द्र : चुप रहो।

नीलूदा : तुम मेरी जबान बन्द नहीं कर सकते, मैं कहूँगा, फिर कहूँगा।

राजेन्द्र : (पिस्तौल निकालकर) बोलते ही जा रहे हो।

नीलूदा : (जवाब में वैसे ही पिस्तौल निकालकर) आ जाओ। मरने से मैं भी नहीं डरता।

स्वामी : क्या करते हो, राजेन्द्र, नीलूदा।

[दोनों पिस्तौलें जेव में रख लेते हैं।]

राजेन्द्र : (हँसकर) पिस्तौल उसी की दोस्त है जिसके हाथ में हो। (अंगड़ाई लेकर बैठ जाता हैं) रात-भर सो नहीं सका।

[इसी समय बाल विखेरे हुए रेणु आती है। उसके मुँह पर मार के निशान हैं, जहाँ-तहाँ खून के दाग हैं। रेणु को आते देखकर लोग एकदम घवरा उठते हैं।]

रेणु : (चिल्लाकर) कहाँ हैं वह ? कहाँ हैं ? कहाँ हैं ? वोलो वोलते क्यों नहीं ?

राजेन्द्र : भाभी !

रेणु : राजेन्द्र ! (थोड़ी देर चुप रहकर) विश्वासघात किया उन्होंने। हमारे मुँह पर कालिख पोत दी। गरीवी में पला हमारा सात्विक जीवन, उद्देश्यहीन और पाप की कीचड़ से सानकर अपना सुख, अपनी कमजोरी को छिपाने वाले को मैं देखने आई हूँ। कहाँ है वह ? तुम लोग देखते रहे और वह इतने नीचे उतर गए ? आसमान में चमकने वाला शुक्र, निर्मल निश्छल शुक्र-तारक प्रलय के वादलों में छिप गया और तुम देखते रहे ? माँ (धीमे स्वर में आवाज धीरे-धीरे वढ़ती चली जा रही है) जैसे ही माँ ने सुना उनके प्राण निकल गए। हम कष्ट सह रहे थे, भूखे थे, नंगे थे फिर भी एक गौरव था कि वह देश के काम में लगे हैं। पुलिस ने माँ को बेंत लगाए। मुझे पीटा। हमको तीन दिन तक बिना पानी और अन्न के वन्द रखा। गालियाँ दीं। माँ का शरीर लोहू लुहान कर दिया। (स्वर धीमा) परएकसान्त्वना थी। (थोड़ी देर चुप रहकर) मालिक मकान ने हमारा

सामान निकालकर बाहर फेंक दिया। हम बेघरबार हो गए, (स्वर धीमा) फिर भी सन्तोष था, अभिमान था। गर्व से मैं लोगों की ओर देखती थी। डरते सहमते हुए लोगों में भी हमारे लिए एक आदर की दृष्टि थी। लुक-छिपकर सहायता लेने की प्रार्थना हमसे की जाती थी। लेकिन आज मेरा वह संचित धन लुट गया। बोलो, बोलते क्यों नहीं ? (चिल्लाकर) कहाँ हैं वह ? मैं स्वयं उनको मारूँगी, और खुद मर जाऊँगी। (सब लोग चुप हैं, निस्तब्ध। रेणु क्षण-प्रतिक्षण उग्र होती जा रही है) माँ, तुम्हें भी अपने पुत्र का यह कुरूप अन्त में देखना बदा था। मैं क्या करूँ ? अब हम लोग किस गौरव के सहारे जीएँगे। मेरा पुत्र (क्रोध से) जब लोग कहेंगे यह है उस डरपोक, बुजदिल, बनावटी क्रान्तिकारी का लड़का···

स्वामी : बहन, शान्त हो।

रेणु : (उबलकर) शान्त ! तुम मुझे शान्त होने को कहते हो, जिसका सब कुछ लुट गया ?

राजेन्द्र : हमें विश्वास है जो भार उन्होंने अपने ऊपर लिया है उस से उनका मस्तक ऊँचा होगा।

[हाँफती हुई वीणा प्रवेश करती है। सब लोग उत्सुकता से देखने लगते हैं।]

वीणा : (हाँफती हुई) क्रान्तिकारी के सामने न कोई भाई है, न बहन, न पति, न पिता, न कोई सम्बन्धी।

[स्वामी उसके मुंह की तरफ देखता है।]

वीणा : मैं परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई हूँ। मनोहर को मैंने मार दिया।

सब लोग : (उछलकर) मार दिया ?

वीणा : मैंने सोते हुए अपने पति की नहीं, देश के शत्रु की हत्या कर दी। सुनती हूँ दिवाकर दा ने ट्यूडर की हत्या कर दी।

सब लोग : क्रान्ति विजयिनी हो। दिवाकर दा धन्य हैं।

रेणु : क्या ? क्या कहा ?

स्वामी : आज दिवाकर ने वह काम किया है जिसकेलिए हमारा इतिहास अमर हो जाएगा। क्या वह जीवित हैं ?

नीलूदा : (दवे स्वर में) उन्हें जीवित रहना चाहिए।

राजेन्द्र : (चिल्लाकर) उनका प्रायश्चित्त पूरा हुआ। वह हमारे नेता हैं, स्वामी, उनका जीवन जरूरी है। वोलिये, वीणा देवी, दिवाकर दा कहाँ हैं ? उन्हें जीना होगा, देश के लिए जीना होगा। पार्टी अपना निर्णय वापस लेती है। वोलिए ?

नीलूदा : ट्यूडर मारा गया, क्रान्ति चिरजीवी हुई। इस प्रान्त में क्रान्तिकारी दल के दो ही वड़े शत्रु थे। दोनों का ही नाश दो महान् व्यक्तियों द्वारा हुआ। मेरा भ्रम था। दिवाकर दा हमारे एकमात्र नेता हैं।

स्वामी : आप चुप क्यों हैं ?

वीणा : मुझे ठीक-ठीक कुछ नहीं मालूम। जव मनोहर की हत्या करके मैं वाहर निकली तभी ट्यूडर की कोठी के आगे पचासों सिपाही और अफसर मौजूद थे। सारे शहर में वेचैनी, भय और आशंका का वातावरण था। मैंने सुना शराव में मस्त ट्यूडर रात को क्लव से लौट रहा था कि सड़क पर किसी ने उसकी हत्या कर दी। मैं समझ गई। अव सवेरे मनोहर की मृत्यु का समाचार भी फैल गया होगा। (दिखाकर) यह मनोहर की छाती से निकले रक्त से सना रूमाल है। मेरा तर्पण पूरा हुआ।

मैं···मैं···क्या वह एक स्वप्न था ?

नीलूदा : (पैरों पर गिरकर) तुम सचमुच भवानी हो, शक्तिमयी माँ।

स्वामी : ऐसे उदाहरण बहुत हैं जिनमें स्त्रियों ने अपने पति की हत्या की हो, लेकिन इस उद्देश्य के लिए नहीं, वीणा।

वीणा : (अपने आप) मेरा हृदय पति के कुकृत्यों से भर गया था।

स्वामी : किन्तु वह तो दिवाकर का हितेच्छु था न ?

वीणा : था, किन्तु बाद में नही रहा। ओहदे के लोभ ने उसे पागल बना दिया था। जब मैंने देखा कि वह दिवाकर के साथ सारे गिरोह को पकड़ने की फिक्र में है, तभी मैंने समझ लिया यह मनुष्य नहीं पशु है। उसने मुझे फुसलाए रखने का आदेश दिया। उसने मुझे दिवाकर से भेद लेने को कहा। उसने मुझे यदि आवश्यकता पड़े तो आत्मसमर्पण करने को कहा।

नीलूदा : क्या मनुष्य इतना भी नीच हो सकता है ?

स्वामी : मनुष्य की ऊँचाई और निचाई का कोई अन्त नहीं।

राजेन्द्र : यासीन अभी तक क्यों नहीं आ रहे हैं ?

रेणु : मैं धन्य हुई, अब मुझे कोई चिन्ता नहीं है। अब मैं शान्त हूँ।

वीणा : मैं दिवाकर दा की तुच्छ शिष्या हूँ, बहन। दिवाकर महान् हैं।

स्वामी : मैं अपनी उम्र का शेष भाग देकर कामना करता हूँ कि दिवाकर दा हमारा नेतृत्व करने के लिए जीवित रहें।

राजेन्द्र : मैं विश्वास करता हूँ कि वह जीवित हैं।

नीलूदा : अब हमें मुरली के पकड़े जाने का भी कोई दुख नहीं है। हमारा प्राण यासीन में अटक रहा है। दिवाकर दा का

यह काम विश्व के क्रान्तिकारियों को प्रेरणा देगा।

स्वामी : अब हम यहाँ सुरक्षित नहीं हैं। ट्यूडर की हत्या से क्रुद्ध होकर पुलिस चप्पा-चप्पा जमीन छान डालेगी। यासीन आ जाते। (दूर देखकर) यह कौन आ रहा है ?

नीलूदा : यासीन, यासीन !

[यासीन आता है।]

यासीन : हमारे नेता दिवाकर दा ने ट्यूडर की हत्या कर दी। उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की।

स्वामी : वह कहाँ हैं ?

यासीन : (चुप रहकर) बारह बजे रात को शराब में मस्त ट्यूडर क्लब से जा रहा था। दिवाकर दा ने छायादार पेड़ के नीचे से ट्यूडर पर पहला फायर किया। वह उसके कान के पास लगा। ट्यूडर ने भी एक फायर किया। दिवाकर दा गोली बचाकर एकदम ट्यूडर के सामने हो गए और चार गोलियाँ लगातार दन-दन करके ट्यूडर पर दाग दीं। वह वहीं ढेर हो गया। मरते-मरते भी एक गोली ट्यूडर की ओर से दिवाकर दा के पैरों में लगी। वह गिर पड़े। लोग शोर सुनकर दौड़े। मैंने उस अन्धेरे में चारों तरफ फायर किया। और दादा को उठाकर अँधेरे-ही-अँधेरे छिपता-बचता चलने लगा। पहले तो लोगों को मालूम ही नहीं हुआ कि क्या हो गया, मैं भी जैसे-तैसे रेल को पार करके जंगल में घुस गया। पर उनके पैर से खून की धार बह रही थी, यह मैंने देखा। खयाल आते ही मैंने कसकर पट्टी बाँध दी। इसी समय दादा को होश आया। वह सारी स्थिति को समझ गए। तीर की तरह हम दोनों दौड़े। लगभग दो मील तक दौड़ने के बाद हम एक जगह ठहरे। दादा

वहुत थक गए थे। बैठकर वोले—'प्यास लग रही है, यासीन ! हम लोग कहाँ हैं ?' मैंने उत्तर दिया, 'लगभग चार मील दूर।' फिर दादा ने पूछा—'ट्यूडर का का क्या हुआ ?' मैंने कहा वह उसी समय ढेर हो गया, दादा। मैं पानी खोजता हूँ, दादा।' इतना कहकर मैं पानी की तलाश में चला। दूर जाकर मुझे पानी मिला। लौटकर मैंने कहा—'लो, दादा, पगड़ी भिगोकर लाया हूँ। लो !' पर वहाँ कोई जवाव नहीं मिला। मैंने समझा शायद चोट से वेहोश हो गए हैं। दियासलाई जलाकर देखा···तो वह अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर चुके थे।

स्वामी : क्या ?

सब : (चिल्ला उठते हैं) दादा !

यासीन : गोली उनके सीने को पार कर चुकी थी। मेरे नीचे से जमीन सरक गई। मैं चाहता था वह जीएँ। उन्हें जीना चाहिए। पार्टी का निर्णय जो भी हो। मैं उनकी जगह प्राण दे दूँगा। पर···

स्वामी : दादा का जीवन सदा ही पवित्र रहा है यासीन ! वह सदा से हमारे नेता रहे हैं। हम चाहते थे वह जीएँ।

[वीणा, रेणु, राजेन्द्र, नीलू सभी ऐसे चुप हो गए जैसे निष्प्राण ! रेणु फटी-फटी आँखों से मौन निस्तब्ध देखती है। वीणा सिर पकड़कर बैठ गई, और सुवकने लगती है। राजेन्द्र सुबकने लगता है, नीलू जैसे जड़ हो गया।]

यासीन : (अपने आप) दादा निरपराध थे। हमीं ने उनका खून किया है।

स्वामी : वहुत वड़ी गलती हुई यासीन; वहुत बड़ी। (आँखों में

आँसू भर आते हैं पर पत्थर की तरह दृढ़ रहकर) अब वह कहाँ हैं ?

यासीन : मरने पर भी कितना भव्य था उनका चेहरा ! जैसे सो रहे हों। समाधि में मग्न हों।

रेणु : (एकदम उठकर) कहाँ हैं मेरे स्वामी, यासीन ?

यासीन : मैंने उन्हें एक अन्धे कुएँ में डालकर मिट्टी और पत्तों से ढक दिया है स्वामी !

सब : दादा ! दादा ! (सब रो पड़ते हैं।)

स्वामी : यह शोक मनाने का समय नहीं है, साथियो। मुझे डर है पुलिस दूर नहीं है। आओ, हम लोग खड़े होकर दादा की स्मृति में अपने-अपने रक्त से उनका तर्पण करें। (स्वामी अपनी कलाई से खून निकालता है। सब लोग अपने शरीर से वैसे ही खून निकालकर) अभय. अमर दिवाकर दा की स्मृति में यही हमारा तर्पण है।

सब लोग : रक्त-तर्पण।

स्वामी : अपने रक्त-तर्पण के द्वारा हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम उनके पद-चिह्न पर चलकर माँ को बन्धन-मुक्त करेंगे।

[सब रोते हुए झुककर प्रणाम करते हैं। फिर खड़े होकर देखते हैं कि रेणु का शरीर निर्जीव हो गया है।]

राजेन्द्र : स्वामी, दादा के साथ भाभी भी चली गईं।

स्वामी : देख रहा हूँ, रेणु का त्याग दिवाकर दा से किसी प्रकार कम नहीं है। इनको भी उसी स्थान पर पहुँचाओ, राजेन्द्र। उसी स्थान पर।

[राजेन्द्र रेणु का शरीर उठाने लगता है। इसी समय दौड़ता हुआ रामदास आता है।]

रामदास : भागो, भागो पुलिस आ रही है। मुरली मुखबिर हो

गया है।

स्वामी : इस पहाड़ के पीछे। पहाड़ के पीछे साथियो !
[नेपथ्य से आवाज आती है] चारों तरफ से। चारों तरफ से।
(और अन्त में) बोलो माँ की जय ! दिवाकर दा की जय !

जय ! जय ! जय !

[नेपथ्य में मातृभूमि की जय के स्वर गूंजते रहते हैं। मंच पर अन्धकार छा जाता है।]

•

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 39859
Date 21.6.71
SIMLA

उदयशंकर भट्ट

जन्म सन् : 1897

मृत्यु सन् : 28 फरवरी 1966

साहित्य सृजन : काव्य, नाटक, एकांकी, उपन्यास, गीति-नाट्य, रूपक, रेडियो रूपक, विवेचनापूर्ण लेख आदि।

स्वर्गीय उदयशंकर भट्ट हिन्दी साहित्य के उन्नायकों में एक थे। बहुमुखी प्रतिभा और रचना कौशल की दृष्टि से भट्ट जी का बहुत ऊँचा स्थान था। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा साहित्य के सभी क्षेत्रों में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। विशेष कर हिन्दी नाटकों के लिखने की प्राचीन शैली को छोड़कर जीवन की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति को अधिक स्पष्ट और सजीव बनाने में आपका विशेष योगदान रहा है। अकेले नाटक क्षेत्र में ही आपने विषय-वस्तु, उद्देश्य तथा शिल्प-विधान का भिन्न-भिन्न रूपों में प्रयोग कर के हिन्दी के मूर्धन्य नाटककारों में अपनी गणना करा ली थी। ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा समस्यापरक नाटक देकर भट्ट जी ने हिन्दी नाट्य जगत को समृद्ध और गौरवमय बनाया है।

क्रान्तिकारी

यह भट्ट जी का राजनैतिक नाटक है
एक झाँकी है। इसमें विभिन्न राजनैतिक
गया है। पाश्चात्य राज्य की अंग्रेजी सत्ता
का यथार्थ चित्र अंकित किया है।

Library IIAS, Shimla
H 812.8 B 469 Kr
00039859

आत्माराम एण्ड संस

दिल्ली . नई दिल्ली . चण्डीगढ़ . जयपुर लखनऊ